चन्दामामा
मार्च १९८१

धरती से अम्बर तक
एक महल बनेगा अपना
भीतर बाहर, आगे पीछे...
दाएं बाएं, उपर नीचे;
रंग बिरंगे जैम्स का
जगमग पूरा होगा सपना।
Cadbury's GEMS
Cadbury's GEMS
कितना सुन्दर सपना...झट ले लो जॅम अपना!

Statement about ownership of CHANDAMAMA (Hindi)
Rule 8 (Form VI), Newspapers (Central) Rules, 1956

1.	*Place of Publication*	...	'CHANDAMAMA BUILDINGS' 188, Arcot Road Vadapalani, Madras-600 026
2.	*Periodicity of Publication*	...	MONTHLY 1st of each calendar month
3.	*Printer's Name*	...	B. V. REDDI
	Nationality	...	INDIAN
	Address	...	Prasad Process Pvt Limited 188, Arcot Road, Vadapalani Madras-600 026
4.	*Publisher's Name*	...	B. VISWANATHA REDDI
	Nationality	...	INDIAN
	Address	...	Chandamama Publications 188, Arcot Road, Vadapalani Madras-600 026
5.	*Editor's Name*	...	B. NAGI REDDI
	Nationality	...	INDIAN
	Address	...	'Chandamama Buildings' 188, Arcot Road, Vadapalani Madras-600 026
6.	*Name & Address of individuals who own the paper*	...	CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND Beneficieries: 1. B. V. HARISH 2. B. V. NARESH 3. B. V. L. ARATI 4. B. L. NIRUPAMA 5. B. V. SANJAY 6. B. V. SHARATH 7. B. L. SUNANDA 8. B. N. RAJESH 9. B. ARCHANA 10. B. N. V. VISHNU PRASAD 11. B. L. ARADHANA 12. B. NAGI REDDI (JR)

All Minors, by Trustee:
M. UTTAMA REDDI, 9/3, V.O.C. Street, Madras-600 024

I, B. Viswanatha Reddi. hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

B. VISWANATHA REDDI
Signature of the Publisher

1st March 1981

वुडवर्ड्स ग्राइप वाटर

CAS/OPPL/3/80 HIN

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

इस महीने की बेताल कथा "जादू का आईना" है।

"शकुन" कहानी हमें यह बताती है कि किसी कार्य के होने व न होने में जो लोग यह विश्वास करते हैं कि यह शुभ और अशुभ शकुनों पर आधारित होता है, पर कभी-कभी उनका व्यवहार किस प्रकार की विपरीत स्थितियों का कारणभूत बन जाता है।

अमर वाणी

स्वभावोनोपदेशेन शक्यते कर्तुमन्यथा,
सुतप्तमपि पानीयं पुनर्गच्छति शीतताम् ॥

[समझा-बुझाकर मानवों के सहज स्वभाव को बदलना संभव नहीं है। जैसे कि सहज ही ठण्डा रहनेवाले पानी को गरम करने पर भी थोड़ी ही देर बाद वह पानी फिर ठण्डा हो जाता है।]

वर्ष : ३२ मार्च १९८१ अंक : ७

एक प्रति : १-५० : : वार्षिक चन्दा : १८-००

एरिकडेन, पांग्ला

प्र.: भारत देश के आदिवासियों को कुछ लोग द्राविड़ मानते हैं, कुछ लोग नहीं मानते! आप का विचार क्या है?

उ.: आज हम जिनको मानव जातियाँ मानते हैं, वे ३०, ४० हज़ार पूर्व नहीं थीं, ऐसा माना जाता है। लेकिन भारत में वानर लक्षणों से मुक्त हो "नर वानर" रूप प्रकट हुए हैं। उदाहरण के लिए रामा पितिकस (९४० लाख वर्ष पूर्व की बात)। इस एक कारण के आधार पर हमारे देश के आदि मानवों को एक जाति का नाम देना उचित प्रतीत नहीं होता। अलावा इसके यह बात स्पष्ट हो जानी चाहिए कि "द्रविड़" शब्द किसी जाति से संबंधित है या भाषा अथवा जीवन-पद्धति से संबंधित है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर जिन्हें मानव जातियाँ (या उप जातियाँ) कहा जाता है, उनमें द्राविड़ जाति का उल्लेख नहीं है। हमारे प्राचीन वैदिक साहित्य में आर्य और दास (दस्यु) के नाम मिलते हैं, पर द्राविडों का उल्लेख नहीं है। उस समय के अनार्य "बिना नाकवाले" (चपटी नाक) काले मानवों के रूप में वर्णित हैं। अगर इन्हें हम किसी जाति के लक्षण माने तो पूर्ण रूप से ये लक्षणोंवाली जातियाँ भारत देश में कहीं नहीं है। सच पूछा जाय तो आर्य शब्द भी जाति वाचक नहीं है। अगर यह सही है तो विष्णु, राम और कृष्ण जैसे अवतार पुरुष आर्य नहीं हो सकते। महाभारत में वर्णित व्यास भी आर्य नहीं हो सकते। महाभारत में उनका वर्णन भी एक राक्षस का स्मरण दिलाता है। इसलिए जो लोग आर्य और द्राविड शब्दों का प्रयोग करते हैं, वे लोग या तो उन्हें जातियों के रूप में भ्रम में पड़े हुए होंगे या लोगों को भ्रम में डालनेवाले होंगे। आज वास्तव में द्राविड़ भाषाएँ तथा द्राविड-भाषा परिवार प्रचार में हैं, मगर इनको अनादि काल की भाषाएँ नहीं मान सकते। कुछ लोगों का कथन है कि हरप्पा सभ्यता से संबंधित चित्रलिपि द्राविड भाषा की है। अगर हम उसे सच माने और उस भाषा का व्यवहार करने वालों को द्राविड समझें, तो भी भारत देश में प्रारंभ में स्थित हरप्पा सभ्यता की सृष्टि करनेवाले द्राविड़ ही हैं, इसे मानने को कोई प्रमाण नहीं है।

तीन अधिकारी

महाराजा विश्वशांत के शासन की सब कोई तारीफ़ करते थे। उनके राज्य में प्रत्येक गाँव का शासन वहीं से होता था। राजा हर साल कुछ गाँवों का निरीक्षण करके वहाँ के शासन का स्वयं पर्यवेक्षण करते थे। देश से संबंधित सारे समाचार घुड़सवारों के द्वारा कोने-कोने में पहुँचा दिये जाते थे। गाँव के मध्य भाग में ताजा खबरें सुनाई जाती थीं।

एक वर्ष राजा देशाटन पर चल पड़े। सबसे पहले वे रामापुर पहुँचे। वहाँ के अधिकारी रामराज ने राजा को अपने कार्यक्रम का परिचय दिया।

रामापुर एक बहुत ही बड़ा गाँव है। शासन का कार्य संभालने के लिए उस गाँव में एक सौ कर्मचारी नियुक्त हैं। वे सब सबेरे कचहरी में आकर शाम तक अपने-अपने काम देखते हैं। मगर सबेरे कोई भी वक़्त पर कचहरी में हाज़िर नहीं होते थे। इसे रोकने के लिए रोज रामराज सबसे पहले कचहरी पहुँच जाता और दर्वाजे पर खड़े हो देर से आनेवाले कर्मचारियों को उचित रूप में दण्ड देता था। एक सप्ताह बाद कर्मचारी वक़्त पर आने लगे थे।

रामराज के मुह से ये बातें सुनकर राजा ने कहा–"क्या यहाँ पर कोई द्वारपाल नहीं है? तुम जो काम करते हो, वह द्वारपाल के जरिये करा सकते थे न?"

"महाराज, द्वारपाल तो एक छोटा सा कर्मचारी है। वह दूसरे अधिकारियों से डरता है। इसलिए वह उनके विरुद्ध कुछ शिकायत नहीं करेगा। अलावा इसके बाकी कर्मचारी उसे रिश्वत देकर अपने अनुकूल बना सकते हैं। मैं सबका अधिकारी हूँ। इसलिए मुझे दर्वाजे पर खड़े देख सभी लोग डरते हैं।" रामराज ने कहा।

"दर्वाजे पर खड़े होने में तुम्हें लज्जा नहीं होती?" राजा ने पूछा।

"महाराज, कर्त्तव्य के पालन में मैं लज्जा और अपमान का अनुभव नहीं करता।" रामराज ने गर्व के साथ कहा।

"तब तो तुम आज से द्वारपाल का काम करो। मैं इस गाँव के लिए किसी और अधिकारी को नियुक्त करूँगा।" राजा ने कहा।

रामराज ने सोचा था कि उसकी बातें सुन राजा उसकी तारीफ़ करेंगे, मगर राजा के मुँह से ये शब्द सुनकर रामराज का चेहरा सफ़ेद पड़ गया। वह बोला—"महाराज, यह तो अन्याय है!"

"इसमें अन्याय की बात क्या है? तुम यहाँ के सभी कर्मचारियों के अधिकारी हो, फिर भी यहाँ का द्वारपाल तुम्हारे अधीन काम करनेवाले अधिकारियों का ज्यादा आदर करता है। दर्वाजे पर न खड़े होने पर तुम्हारे अधीन काम करनेवाले अधिकारी तुम्हारी परवाह नहीं करते! अलावा इसके उन पर तुम्हारा विश्वास भी नहीं है! सब से महत्वपूर्ण बात यह है कि तुम अपना अमूल्य समय दर्वाजे पर पहरा देने में ख़र्च करते हो। लगता है कि तुम यही एक जिम्मेवारी ठीक से संभालते हो?" यों समझाकर राजा ने उस गाँव केलिए एक नये अधिकारी को नियुक्त किया और वहाँ से भीमपुर चले गये।

राजा ने भीमपुर जाने का समाचार पहले किसी को नहीं बताया। उनके वहाँ पर पहुँचने के एक घंटा पहले ही यह खबर भीमपुर में पहुँची। राजा के आने की खबर जब भीमपुर के मध्य भाग में सुनाई गई, तब वहाँ का अधिकारी अपनी कचहरी में न था, बल्कि गाँव के बीच में था। यह ख़बर सुनते ही उस अधिकारी ने कार्यालय में पहुँच कर राजा के भव्य स्वागत करने का इंतजाम किया।

भीमपुर पहुँचते ही वहाँ का इंतजाम देख राजा ख़ुद चकित रह गये। राजा का

उद्देश्य था कि अचानक उस गाँव का निरीक्षण करके अधिकारी को चकित कर दे, लेकिन अब राजा को ही चकित होना पड़ा ।

"मेरे आने की खबर तुम्हें पहले कैसे मालूम हो गई?" राजा ने पूछा ।

अधिकारी ने सोचा कि राजा के स्वागत का यह प्रबंध देख राजा उसकी तारीफ़ करेंगे, वह बोला-"महाराज, मैं ने अचानक आप के आने की खबर सुनी । तुरंत मैंने ये सारे प्रबंध किये ।"

"तुम्हारा कार्यालय तो गाँव के एक छोर पर है । खबरें तो गाँव के बीच सुनाई जाती हैं । उस वक़्त तुम कार्यालय में न रहकर गाँव के बीच में क्यों थे?" राजा ने भीमराज से पूछा ।

"महाराज, कार्यालय के किसी काम पर मुझे उस वक़्त वहाँ पर जाना पड़ा ।" भीमराज ने जवाब दिया ।

"तुम्हारे अधीन कई कर्मचारी हैं! ऐसी हालत में तुम्हें कार्यालय से बाहर क्यों जाना पड़ा? इसका मतलब है कि तुम अपनी जिम्मेदारियाँ ठीक से नहीं जानते । तुम्हारी जगह में किसी और अधिकारी को नियुक्त करता हूँ!" यों कहकर राजा ने उसी वक़्त एक नये अधिकारी को नियुक्त किया और वहाँ से सोमपुर केलिए रवाना हुए ।
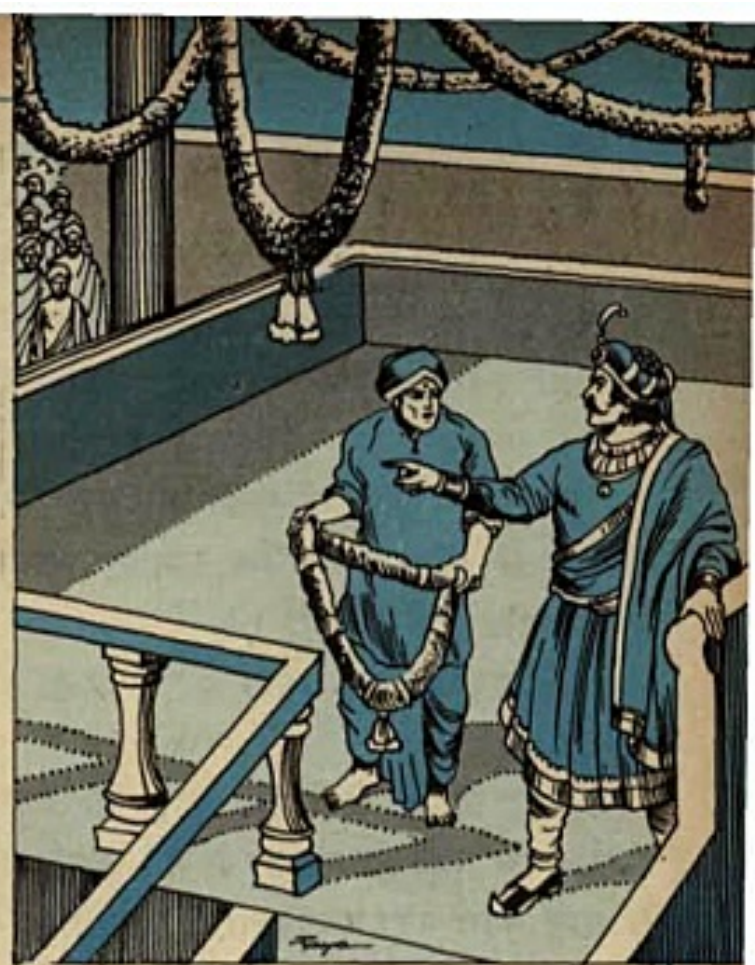
सोमपुर का अधिकारी सोमराज ने राजा विश्वशांत का अपूर्व स्वागत किया । राजा ने सोमराज से पूछा-"सोमराज! तुम्हारे स्वागत और सत्कार प्रशंसनीय हैं, मगर यह बताओ कि एक अधिकारी के रूप में तुमने कौन से अच्छे कार्य किये?"

"महाराज, गाँव के सभी लोग यही बताते हैं कि मेरा इस गाँव में रहना ही ज्यादा मंगलदायक है! इसका प्रमाण यह है कि इस गाँव में जो भी शोक-सभाएँ होती हैं, वे सब मेरी गैर हाजिरी में ही होती हैं।" सोमराज ने जवाब दिया ।

"शोक-सभाएं कैसी?" राजा ने पूछा ।

"राज्य में या गाँव में भी अगर किसी

की मौत हो जाती है तो उस संदर्भ में कचहरी में एक शोक सभा बुलाकर दिवंगत व्यक्ति के प्रति श्रद्धांजलि समर्पित करना हमरा रिवाज है। यह कार्यक्रम मेरी ही अध्यक्षता में होता है, मेरी गैर हाज़िरी में वीरभद्र चलाता है। पिछले वर्ष छब्बीस प्रमुख व्यक्तियों की मृत्यु पर वीरभद्र ने ही सारी शोक सभाएँ चलाई हैं।" सोमराज ने कहा।

"मंगलदायक कार्य क्या हैं?" राजा ने पुछा।

"मेरी गैर हाजिरी में कोई भी शुभ कार्य संपन्न नहीं हो सकता है न! इसलिए वे सारे कार्य मेरी अध्यक्षता में ही होते हैं! इसीलिए सभी लोग मुझे शुभकार्यों का और वीरभद्र को अशुभ का प्रतीक मानते हैं! लेकिन इस में वीरभद्र का कोई दोष नहीं है! अशुभ वीरभद्र के रहने की वजह से नहीं होते, मेरे न रहने के कारण होते हैं!" सोमराज ने गर्व के साथ कहा।

राजा ने सोमराज की ओर तीक्ष्ण दृष्टि ये देख कर कहा–"एक साल में छब्बीस बार याने महीने में लगभग दो बार प्रमुख व्यक्तियों की मृत्युएँ हो रही हैं, फिर भी अगर तुम एक भी शोक सभा में उपस्थित न थे, इसका मतलब है कि कई दिन तुम गाँव से बाहर रहते हो। केवल शुभकार्य शुरू करने के लिए ही तुम गाँव में आ जाते हो, जिम्मेदारी रखनेवाले अधिकारी को हमेशा गाँव में उपस्थित रहना चाहिए, गाँव के बाहर नहीं! इसलिए मैं तुम्हारी जगह वीरभद्र को नियुक्त करता हूं।"

इसके बाद राजा जब सोमपुर से रवाना होने लगे, तब मंत्री ने पूछा–"प्रभू! क्या हमें और गाँवों का निरीक्षण करना है?"

"कोई जरूरत नहीं; मैं ने इन तीन गाँवों के अधिकारियों के साथ जैसा व्यवहार किया है, उसे सारे राज्य को मालूम करवा दो, बस!" राजा ने कहा।

इसके बाद राजा विश्वशांत का राज्य हमेशा संपन्न ही रहा।

[१०]

[चतुर्नेत्र ने अपनी और एकाक्षी मांत्रिक के बीच की दुश्मनी के बारे में समरसेन को कह सुनाया। दोनों एक ही गाँव के हैं, हिरण को लेकर उनके बीच झगड़ा शुरू हुआ। सिंह के डर से वह एक पेड़ पर छिपा था। एकाक्षी ने गाँववालों को बताया कि चतुर्नेत्र भूत बन गया है, ये बातें सुना रहा था, तभी पहाड़ के नीचे कोलाहल हुआ। बाद...]

चतुर्नेत्र के साथ एकाक्षी मांत्रिक ने जो कुछ अन्याय किया, उसका पूरा परिचय दे रहा था, इतने में पहाड़ की तलहटी में बड़ा कोलाहल सुनाई दिया। समरसेन और उसके सैनिक भी आश्चर्य में आकर उस ध्वनि की दिशा में देखने लगे।

सूर्यास्त हो चुका था। सारे पहाड़ी प्रदेश में गहरा अंधकार फैल गया। वैसे दूर पर लोगों की चिल्लाहटें सुनाई दे रही थीं, लेकिन समरसेन को यह बिलकुल दिखाई नहीं दे रहा था कि वे लोग कहाँ पर हैं और किधर बढ़ रहे हैं। उसी समय एकाक्षी मांत्रिक का उच्च स्वर सुनाई दिया—"काल भुजंग! कपाल!"

चतुर्नेत्र ने पल भर के लिए उस ओर नज़र दौड़ाई और कहा—"समरसेन, एक ओर से तुम्हारे कुंडलनी द्वीप के लोग और दूसरी ओर से एकाक्षी मांत्रिक आ रहे हैं!

लगभग चालीस-पचास लोग हाथों में मशाल लिये चिल्लाते हुए पहाड़ पर चढ़ रहे थे।

समरसेन ने तलवार की मूठ पर हाथ रखकर कहा–"चतुर्नेत्र, इस वक़्त हमारा कर्तव्य क्या है? अकेले कुंभांड होता तो मैं अपने साथ के पांच सैनिकों के साथ उसका सामना कर सकता था। मेरे सुशिक्षित सैनिकों के तीरों के सामने वे जंगली लोग टिक नहीं सकते! लेकिन मांत्रिक एकाक्षी का सामना कैसे करे?"

"तुम एकाक्षी की बात मुझपर छोड़ दो! मगर एक बात याद रखो! तुम्हारा इस पहाड़ी प्रदेश में अंधेरे में कुंभांड का सामना करना मेरे ख्याल से उचित नहीं है! अगर वह कुंभांड और जंगली लोग एकाक्षी मांत्रिक की नज़र में आ जाये तो तुम जो काम करना चाहते हो, वह काम वही खुद कर देगा!" चतुर्नेत्र ने कहा।

इधर चतुर्नेत्र समरसेन को ये बातें समझा रहा था, उधर उत्साह पूर्वक कोलाहल करते पहाड़ पर चढ़नेवाले जंगलियों तथा उनका नेतृत्व करनेवाले कुंभाण्ड को एकाक्षी मांत्रिक ने सामने से प्रवेश करके रोका।

इसे देख समरसेन प्रसन्न हो बोला– "वाह, जिस पल का मैं खुशी के

में नाव और नाग कन्या की कहानी तुम्हें बाद को सुनाऊँगा। इस से पहले हमें इन लोगों की नज़र से बचकर निकल जाना सब तरह से हितकर होगा।"

समरसेन को भी लगा कि उस हालत में इससे बढ़कर कुछ नहीं किया जा सकता। चतुर्नेत्र ने कुंडलनी द्वीपवासियों की बात बताई, वे लोग शायद देश द्रोही कुंभांड के नेतृत्व में रहनेवाले जंगली लोग होंगे।

"लो, देखो! वे लोग इसी ओर आ रहे हैं! पहाड़ पर चढ़ रहे हैं!" इन शब्दों के साथ चतुर्नेत्र ने उंगली का इशारा किया। समरसेन और उसके सैनिकों ने उस दिशा की ओर देखा।

साथ इंतज़ार कर रहा था, वह आ गया।"

पर चतुर्नेत्र ने अनिच्छा पूर्वक सर हिलाते हुए कहा—"समरसेन! जल्दबाजी में आकर दुराशा में मत पड़ो। तुम धन के ढेरों से भरी नाव और नाग कन्या का वृत्तांत ठीक से नहीं जानते? उनसे संबंधित परम रहस्य को आखिर तुम्हें भी मैं पहले नहीं बता सकता! तिस पर एकाक्षी बातूनी भले ही क्यों न हो, मगर वह मूर्ख नहीं। देखेंगे, आखिर क्या होता है? चलो, हम उस भारी चट्टान के पीछे छिप जायेंगे।" इसके बाद सब लोग चतुर्नेत्र के पीछे चल पड़े। थोड़ी ही देर में वे सब कुंभाण्ड तथा जंगलियों के समीप में स्थित एक भारी चट्टान के पीछे पहुँच गये।

इस बीच एकाक्षी मांत्रिक को देख कुंभाण्ड भय कंपित हो उठा। उसके साथ रहनेवाले जंगली युवक भागने के लिए इधर-उधर ताक रहे थे, तब एकाक्षी मांत्रिक खिल-खिलाकर हँस पड़ा और बोला—"तुम लोगों में से यदि कोई अपनी जगह से हिला, तो उसकी मौत निश्चित है। मेरी आँखों में पड़नेवाला कोई भी प्राणी मेरी आज्ञा के बिना हिल-डुल नहीं सकता!" यों कहकर उसने सर घुमाकर देखा, तब ललकार उठा—"काल भुजंग! कपाल! इन लोगों को घेर लो!" दूसरे ही पल में काल भुजंग आगे कूद

पड़ा। फुत्कार करते जंगली युवकों के चारों तरफ़ चक्कर काटने लगा। कपाल हवा में चक्कर काटते हुए उनके सिरों पर उड़ने लगा। भय कंपित हुए कुंभाण्ड तथा जंगली युवकों की ओर अपनी क्रोध भरी नज़र दौड़ाकर एकाक्षी मांत्रिक ने पूछा-"तुम लोग कौन हो? कहाँ जा रहे हो?"

यह सवाल सुनकर कुंभाण्ड डर के मारे एक दम थर-थर कांपने लगा। उसकी समझ में न आया कि सच कहना है या झूठ कहकर बचकर निकलना है! उस द्वीप के मांत्रिकों के बारे में उसने जंगलियों के मुंह से सुन रखा था, पर उनको वह पहली बार अभी देख रहा था।

"मैं इन जंगलियों का राजा हूँ। मेरा नाम कुंभाण्ड है।" बस, कुंभाण्ड यही जवाब दे पाया।

एकाक्षी ने दांत पीसते हुए पूछा-"तो तुम लोग कहाँ जा रहे हो?"

अब कुंभाण्ड को लगा कि सच बताना पड़ेगा! अगर वह सच्ची बात छिपा भी दे तो जान के डर से जंगली लोग सच बता देंगे। कुंभाण्ड ने यही विचार किया। उसने कहा-"मैंने सुना है कि इस पहाड़ की चोटी पर से देखने पर एक नाव दिखाई देगी। उसी को देखने जा रहा हूँ।"

यह उत्तर सुनकर एकाक्षी ठहाके मारकर हँस पड़ा। वह जानता था कि ये जंगली लोग और कुंभाण्ड वहाँ पर क्यों जा रहे हैं।

"ओह! इस अंधेरे में सिर्फ़ नाव को देखने के लिए इस पहाड़ की चोटी पर चढ़ रहे हो? वाह! तुम्हारी अक़्लमंदी अद्भुत है! इन असभ्य व जंगली लोगों पर तुम्हारा प्रभुत्व सारे देवताओं पर इन्द्र-पद जैसा है! तुम्हारे योग्य पद है! सच बताओ, तुम उस नाव में भरी धन के ढेरों पर क़ब्जा करने की इच्छा रखते हो न? इसीलिए वहाँ जाना चाहते हो?" एकाक्षी ने पूछा।

कुंभाण्ड थर थर कांपते जमीन में दृष्टि गड़ाकर देखता रह गया। एकाक्षी मांत्रिक ने फिर गरजकर पूछा–"बताओ; है या नहीं?" कुंभाण्ड ने भर्राये हुए स्वर में उत्तर दिया–"जी हाँ!"

एकाक्षी मांत्रिक ने संतुष्टि के साथ सर हिलाकर कहा–"इस द्वीप में मैंने कई दिन पहले पाँच-छे नये व्यक्तियों को देखा है। उनकी पोशाकें तुम्हारी पोशाकों से मिलती-जुलती हैं। लगता है कि वे भी तुम्हारे जैसे नाव की धन राशियों को हड़पने के लिए चल पड़े हैं। क्या तुम उसी दल के तो नहीं?"

यह सवाल सुनने पर कुंभाण्ड समझ गया कि एकाक्षी ने किन लोगों को देखा है! उसके मन में यह दृढ़ विश्वास हो गया कि उससे पूर्व कुंडलिनी द्वीप से चले आये समरसेन और उसके सैनिक ही वे लोग होंगे।

"मैं उस दल का तो नहीं हूँ, लेकिन मैं यह बात जानता हूँ कि वे लोग कौन हैं? यह बात जानकर कि वे लोग इस द्वीप में पहुँच गये हैं, तब मैं उनका अंत करने के लिए यहाँ पर आया हूँ। मैं इसी ख्याल से इधर आया कि धन का लोभ रखनेवाले वे द्रोही जरूर उस नाव को खोजते इधर आ गये होंगे! रास्ते में आप से मेरी मुलाक़ात हो गई!" कुंभाण्ड ने सचाई को छिपाते हुए कहा।

उनका वार्तालाप सुनकर चतुर्नेत्र ने यही अच्छा मौक़ा समझा और पुकारा–"उलूक! नर वानर!" फिर चट्टान के पीछे से बाहर निकलते हुए समरसेन को चेतावनी दी। उसी वक़्त समरसेन तथा उसके सैनिक तीरों का निशाना बनाकर कुंभाण्ड और जंगलियों पर बाणों की वर्षा करने लगे।

'उलूक' को पुकारने की आवाज सुनकर एकाक्षी मांत्रिक विस्मय में आ गया और चारों तरफ़ नजर दौड़ाई। तब तक बाणों की चोटें खाकर कुछ जंगली युवक

जमीन पर लोट रहे थे। कुंभाण्ड एक छलांग मारकर पहाड़ी तलहटी की ओर भागने लगा।

जान के डर से भागनेवाले जंगलियों तथा कुंभाण्ड का समरसेन और उसके सैनिक पीछा करने लगे। अंधेरा होने के कारण सैनिकों के निशाने कभी कभी चूक जाते थे। कुंभाण्ड तलवार चमचमाते चिल्ला रहा था–"तुम लोग भागो मत! रुक जाओ।"

उधर उलूक का नाम सुनकर चौंकनेवाला एकाक्षी जल्द ही संभल गया, तलवार फ़हराते एक-दो क़दम आगे बढ़ा, दांत पीसते हुए बोला–"अबे, चतुर! अब मुझे मालूम हो गया कि तुम एक दम नालायक़ हो। तुम आज तक इस बात का घमण्ड कर रहे थे कि मंत्र-तंत्र विद्याओं में तुमको जीतनेवाला कोई वीर या मांत्रिक नहीं है। अब क्या तुम इन तुच्छ मानवों के बाणों की मदद से मुझे जीतने का सपना देखते हो? अगर मैं इन जंगलियों को उकसा दूं तो तुम्हारे सभी मित्रों को ये लोग मिनटों में काटकर उनकी लाशों के ढेर लगा देंगे।"

पर चतुर्नेत्र एकटक एकाक्षी की ओर देखते मौन रह गया। उन्हें पहाड़ी तलहटी में कुंभाण्ड की चिल्लाहट और जंगलियों का कोलाहल सुनाई दे रहा था। उसके मन में यह शंका पैदा हुई कि समरसेन को कोई खतरा पैदा हो सकता है! वह बोला–"अरे एकाक्षी! तुम्हारी बकवास का जवाब देने की मुझे फ़ुरसत नहीं! अलावा इसके हमारे सेवकों के बीच होनेवाली लड़ाई के द्वारा हमें कोई प्रयोजन भी सिद्ध न होगा! तुम अच्छी तरह से जानते हो कि तुम्हारी तलवार व भाले मेरा कुछ बिगाड़ नहीं सकते! अभी वह दिन निकट आनेवाला है जब कि इस बात का फ़ैसला हो जाएगा कि तुम बच रहोगे या मैं! तब तो केवल इस बाद-विवाद के जरिये कोई प्रयोजन सिद्ध न होनेवाला है।"

इसके उत्तर में एकाक्षी मांत्रिक कुछ कहने को हुआ, तब चतुर्नेत्र ने अपनी गुच्छेदार टोपी का अपने हाथ से स्पर्श किया। दूसरे ही क्षण वह उस जगह पहुँचा, जहाँ पर समरसेन तथा कुंभाण्ड के बीच भयंकर युद्ध चल रहा था। एक ओर जंगली लोग भाले व बरछे फेंकते आगे बढ़ने की सोच रहे थे, पर समरसेन के सैनिक अपने बाणों से उन्हें घायल बनाते हुए आगे बढ़ने से रोक रहे थे।

उस हालत में समरसेन और कुंभाण्ड उस युद्ध क्षेत्र के बीच तलवारें खींच कर भयंकर युद्ध कर रहे थे। तब तक चन्द्रोदय हो चुका था, इसलिए वह सारा प्रदेश चांदनी की रोशनी में खिल उठा।

चतुर्नेत्र थोड़ी दूर पर खड़े हो सोच रहा था कि अब क्या किया जाय? उसके मन में यह शक हुआ कि कुंभाण्ड को बचाने केलिए एकाक्षी मांत्रिक वहाँ पर आ धमकेगा! इसलिए उसने सोचा कि एकाक्षी मांत्रिक के आने के पहले ही कुंभाण्ड और जंगलियों का संहार करना उचित होगा। अगर यह संभव न हुआ तो समरसेन और उसके सैनिकों को दूसरे सुरक्षित प्रदेश में ले जाना चाहा।

चतुर्नेत्र यों विचार कर ही रहा था कि तभी भेड़ियों की भयंकर ध्वनियाँ सुनाई दीं। चांदनी की रात में आहार की खोज में निकला भेड़ियों का झुंड खून की गंध पा कर उसी ओर बढ़ा चला आ रहा था।

सब लोगों ने देखा कि भेड़ियों का झुंड पहाड़ी चट्टानों पर कुदते, झाड़ियों की ओट में दौड़ते उन्हीं की ओर बढ़ा चला आ रहा है। सब लोग यह सोच कर डर गये कि लड़ाई करके दुश्मन का संहार करने के पहले ही भूखे भेड़िये उनका अंत कर डालेंगे। दूसरे ही क्षण लड़नेवाले जंगली लोग और समरसेन के सैनिक वहाँ से भागने लगे। समरसेन तथा कुंभाण्ड ने तलवार की लड़ाई रोक दी और अपने अनुचरों के भागने की दिशा की ओर दौड़ पड़े।

(और है)

जादू का आईना

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया, पेड़ से शव उतारकर कंधे पर डाल, हमेशा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा–"राजन, सभी लोग इस भ्रम में पड़ जाते हैं कि अद्‌भुत शक्तियों द्वारा बड़ा लाभ पहुँचता है। लेकिन कभी-कभी उनके द्वारा अपार हानि होती है। इसके उदाहरण के रूप में मैं आप को वज्रगिरि के राजा अमरदीप की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनिये।"

बेताल यों सुनाने लगा–"वज्रगिरि के राजा अमरदीप के मन में इस बात की बड़ी लालसा थी कि वह एक आदर्श शासक के रूप में राज्य करके अपार यश प्राप्त करे। लेकिन इसके लायक़ सामर्थ्य, शक्ति और युक्तियाँ वे रखते न थे। फिर भी वह हर सन्यासी को अपना

बेताल कथाएँ

उद्देश्य सुनाकर उनकी सहायता की कामना करते थे। पर वास्तव में कोई भी सन्यासी अमरदीप की सहायता न कर पाये।

एक बार कोई साधू अमरदीप को देखने आये। उनका उद्देश्य जानकर राजा के हाथ एक आईना देते हुए बोले–"राजन, यह एक अद्‌भुत शक्ति रखनेवाला आईना है। यह आईना एक हजार भेदियों के बराबर है। किसी भी समय अगर आप को किसी पर शक हो जाय तो उनकी याद करके इस आईने में देखियेगा तो आप को यह मालूम हो जाएगा कि वे लोग आप के बारे में क्या सोचते हैं? इस आईने की मदद से आप अपने दरबारियों तथा कर्मचरियों के मन को भांपकर आदर्श पूर्ण राज्य कर सकते हैं।"

राजा ने सोचा कि आईने की मदद से वह एक आदर्श राजा बनकर इतिहास प्रसिद्ध राजा बन सकता है। इसके बाद अमरदीप ने उस आईने को सब की आँख बचाकर छिपा रखा और पूर्णतया उस पर निर्भर रहकर राज्य करने लगा। इस कारण राजा ने अपनी बुद्धि का उपयोग करना बंद किया। मंत्रियों से सलाह-मशविरा करना छोड़ दिया। इसके पहले राजा कुछ लोगों पर पूर्ण रूप से विश्वास करके उनकी सलाहों का पालन करता था। लेकिन अब आईना खुद उनके मन की बातों को बता देता था।

मंत्रियों ने राजा के व्यवहार में परिवर्तन देखा, पर इसका कारण वे समझ न पाये। राजा खुद कोई निर्णय लेता और उनको अमल करने का आदेश मंत्रियों को देता था, लेकिन उनकी सलाह न लेता था। अगर किसी के मन में राजा के निर्णयों के प्रति कोई संदेह होता तो तुरंत राजा को पता चल जाता था।

थोड़े दिन बाद राजा अमरदीप को अपने प्रधान मंत्री विक्रमसेन पर संदेह पैदा हुआ। उसे आईने के द्वारा यह मालूम हुआ कि विक्रमसेन के मन में

राजा के प्रति कोई आदर का भाव नहीं है, बल्कि उसे मूर्ख समझता है; तुरंत राजा ने प्रधान मंत्री को कारागार में बन्दी बनाया।

इस घटना के बाद अनेक राजकर्मचारियों के मन में राजा के विवेक के प्रति शक पैदा होने लगा। इसके बाद वे सभी राजा की शंका के शिकार बन गये। सब के विचार आइने में दिखाई दिये, इस पर राजा ने उन सब को कारागार में बन्दी बनवाया।

इस बीच देश भर में आन्दोलन शुरू हुआ। राजा ने सोचा कि जनता के बीच शांति क़ायम करने की जिम्मेदारी सेनापति को सौंप दी जाय! पर राजा अमरदीप के मन में यह विचार आया कि इसके पूर्व सेनापति के मन की बात समझ ले। राजा ने आईने में देखा तो वह एक दम घबरा गया। सेनापति पड़ोसी राजा के साथ समझौता करके राजा को गद्दी से उतार देने की योजना बना रहा है।

फिर क्या था, सेनापति को भी राजा ने कारागार में डाल दिया।

अब वज्रगिरि की प्रजा के मन में इस बात का कोई संदेह नहीं रह गया कि उनका राजा मति भ्रष्ट हो गया है। प्रकट रूप में जनता कहने लगी कि राजा तो पागल हो गया है और वह अब राज्य चलाने के लायक़ नहीं है। इस पर अमरदीप ने अपने बेटे की सलाह लेनी

चाही। युवराजा कांतिदीप के विचार भी आईने में साफ़ मालूम हुए। वह यह सोच रहा है कि उसके पिता की हत्या कराई जाय या उसको कारागार में बन्दी बनाकर वही राज्याभिषेक करवा ले।

इसके बाद राजा ने विचार किया कि अपने पुत्र के मन में ऐसे विचार पैदा करनेवाला वह खुद जनता के बीच एक आदर्श राजा के रूप में शासन करने में असमर्थ है। इस विचार के आते ही राजा ने अपने पुत्र कांतिदीप को बुलाकर समझाया–"बेटा, मैं अब राज्य करना नहीं चाहता, कल मैं तुम्हारा राज्याभिषेक करूंगा। इसके बाद जंगल में जाकर मैं तपस्या करना चाहता हूँ।" यों समझाकर उसी दिन राजा ने अपने सारे कर्मचारियों को कारागार से मुक्त किया।

दूसरे ही दिन कांतिदीप राजा बनाया गया। अमरदीप ने जादू के आईने को फोड़कर गेरुए वस्त्र धारण किये और तपस्या करने के लिए जंगल में चला गया। इस परिवर्तन को देख वज्रगिरि की सारी प्रजा बहुत प्रसन्न हो उठी।

बेताल ने यहाँ तक कहानी सुनाकर कहा–"राजन, ऐसा अनोखा आईना अमरदीप के लिए क्यों उपयोगी साबित न हुआ? क्या इसमें राजा की कोई त्रुटि थी या आईने में कोई दोष था? राजा ने इस बात पर विचार किये बिना ही आईने को क्यों फोड़ दिया कि उसके लिए जो आईना उपयोगी न बन पाया, वह शायद उसके बेटे के लिए उपयोगी साबित हो जाय! क्या इस ईर्ष्या के भाव से कि उसका पुत्र उस आईने की मदद से एक आदर्श राजा के रूप में शासन करेगा? इन संदेहों का समाधान जानकर भी न देंगे तो आप का सिर फटकर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने यों जवाब दिया: "उस आईने के अन्दर चाहे जो भी अद्भुत शक्ति क्यों न भरी हो, पर आदर्श

राजा के रूप में शासन करने में मदद देने की शक्ति नहीं है। वह सिर्फ़ मनुष्यों के विचारों का परिचय मात्र देता है, राजा के मन में जब किसी के प्रति संदेह होता है, तभी वह आईने में उनके विचारों को देखता है। सहज ही वे विचार राजा के विरुद्ध ही होते हैं। क्योंकि बिना किसी प्रकार के कारण राजा किसी पर शंका नहीं करता है न? अलावा इसके साधारण समयों में राजकर्मचारी अपनी निजी समस्याओं के बारे में सोचते हैं, लेकिन यह बात नहीं सोचते कि राज्य-शासन के मामलों में कैसे मदद पहुँचाये! यह आईना तो राजकर्मचारियों की शक्ति एवं सामर्थ्य का परिचय नहीं देता और नहीं दे सकता। वास्तव में राजा के लिए अपने कर्मचारियों की शक्ति एवं सामर्थ्य ही उपयोगी हो सकती हैं। पर तात्कालिक प्रेरणाओं के कारण मनुष्यों में जो तरह तरह के विचार पैदा होते हैं, वे आचरण में लाये नहीं जाते! वे सिर्फ़ विचार मात्र रह जाते हैं। मगर जब वे विचार राजा के विरुद्ध होते हैं, तब राजा को ऐसा मालूम होता है कि वे राज्य के प्रति विद्रोह करने की इच्छा रखते हैं। जादू के आईने ने अमरदीप के प्रति यही बड़ा द्रोह किया है। उसका दूसरा छोटा द्रोह यह था कि राजा के द्वारा समर्थता पूर्वक राज्य करने के लिए जिन मार्गों का अवलंबन करना चाहिए था, उन सभी का स्थान उस आईने ने ले लिया है। इसका फल यह हुआ कि राजा को जहाँ एक आदर्श शासक कहलवाना था, वहाँ पर आईने की वजह से वह एक नालायक़ शासक कहलाये। वह आईना राजा के पुत्र को भी उसी मार्ग पर ले जा सकता है और उसके पतन का कारण बन सकता है। इसी ख्याल से राजा ने उस आईने को फोड़ देना जरूरी समझा।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो फिर से उसी पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

धोखे की सजा

रामापुर में श्रीरामनवमी के उत्सव ठाठ से मनाये जाते हैं। इस वास्ते गाँववालों ने चन्दा वसूल किये। मंदिर के न्यासधारियों में वैशाख एक था, जिस पर सब का विश्वास था। इसलिए जो धन वसूल हुआ, उसे वैशाख के यहाँ रखने का सब ने निर्णय किया। वैसे वैशाख अमीर न था, लेकिन ईमानदार था।

मंदिर के न्यासधारियों में भद्रसेन नामक अमीर भी एक था। भगवान की संपत्ति उसके यहाँ न रखकर वैशाख के यहाँ रखने पर वह मन ही मन जलता था। यह बात भांपकर वैशाख ने ईश्वर की संपत्ति एक पोटली बनाकर भद्रसेन के हाथ सौंप दी और कहा–"यह संपत्ति आप के यहाँ ज्यादा सुरक्षित रह सकती है। जब तक इसकी जरूरत नहीं पड़ेगी, तब तक आप इसे अपने ही पास रखियेगा!"

भद्रसेन इस बात पर बड़ा खुश हुआ कि कम से कम वैशाख ने उसकी बुजुर्गी को मान लिया है। तब वह बोला–"भाई, जब इस धन की जरूरत पड़े, ले जाना।"

मगर इस बीच एक अप्रत्याचित घटना हो गई। भद्रसेन का लड़का एक जुआखोर था। वैशाख के द्वारा अपने पिता को धन की पोटली सौंपते उसने देख लिया। उसने अपने पिता को धन छिपाते देखा और उसे हड़प लिया।

दो दिन बाद गाँव के बुजुर्गों ने एक सभा बुलाई, उत्सवों की तिथियों का निर्णय किया और वैशाख को धन लाने का आदेश दिया।

वैशाख ने भद्रसेन के घर जाकर धन माँगा। उसे पता चला कि धन की पोटली गायब है। उसके यह समझते देर न लगी कि वह पोटली कैसे गायब हो गई है।

रघुनाथ शर्मा

उसने सोचा कि उसके पुत्र ने अब तक सारा धन जुएँ में खो दिया होगा। अब उसे अपनी संपत्ति से वैशाख को धन चुकाना होगा, लेकिन भद्रसेन का मन अपना धन देने को मानता न था। अलावा इसके वैशाख ने जब उसके हाथ धन सौंपा था, इसके कोई गवाह या रसीद न थी।

इस कारण भद्रसेन ने वैशाख से साफ़ कह दिया कि वह उस धन की बाबत कुछ नहीं जानता है। ये बातें सुनने पर वैशाख का कलेजा कांप उठा। वह गांव के बुजुर्गों को क्या जवाब दे सकता है? क्या उतना धन चुकाना उसके लिए मुमकिन है? अगर न चुकाया तो गांववाले उसके बारे में क्या सोचेंगे?

चाहे जो हो, अपने मन को दृढ़ बनाकर वैशाख ने सच्ची बात गांव के बुजुर्गों को बता दी। भद्रसेन कंजूस ज़रूर था, पर एक बुजुर्ग के रूप में उसका बड़ा नाम था। इस वजह से गांव के बुजुर्गों ने वैशाख की बातों पर यक़ीन नहीं किया। सबने एक स्वर में यही कहा—"हम लोग यह सब कुछ नहीं जानते; तुम कल इस समय तक धन लाकर हमें दे दो।"

धन चुकाने के साथ गांववालों के बीच वैशाख अपमानित भी हुआ। घर लौटकर वह चिंता में डूब गया।

भद्रसेन के पुत्र ने यह सोचकर दो दिन तक उस धन को सुरक्षित ही रखा कि कहीं उसका पिता पूछ न बैठे। पर जब

उसके पिता को इस संबंध में चुप देख उसने दो और साथियों के साथ जुआ खेला, उसमें सारा धन खो बैठा।

इसके बाद पछताते हुए भद्रसेन का लड़का घर लौट आया। मगर उस जुए में जिसने सारा धन जीत लिया था, उसको दूसरे जुआखोर ने नहीं छोड़ा। वह चिकनी-चुपड़ी बातें करके धन जीतनेवाले को एक शराब की दूकान में ले गया, उसे खूब शराब पिलाकर वह धन हड़प लिया और चंपत हो गया।

रास्ते में उसे गश्त देनेवाले सिपाही दिखाई दिये। उन्हें देखकर वह जुआखोर घूम पड़ा और तेजी के साथ चलने लगा। गश्त देनेवाले सिपाहियों ने उस पर शक करके उसका पीछा किया। जब जुआखोर एक गली के नक्कड़ में पहुँचा, तब वह धन की उस पोटली को एक मकान के आंगन में फेंककर भाग खड़ा हुआ।

जुआखोर ने जिस मकान में धन की पोटली फेंक दी थी, वह मकान संयोग से भद्रसेन का ही था। भद्रसेन चोरों के डर से रात के वक़्त ठीक से सोता न था। अपने आंगन में रुपयों की खनखनाहट सुनकर भद्रसेन उठ बैठा और किवाड़ खोलकर उसने धन की पोटली अपने हाथ में ले ली। उसी वक़्त सिपाही उस मकान के सामने आ पहुँचे। धन की पोटली को भद्रसेन के हाथ में देख सिपाहियों ने उसे पकड़ लिया। भद्रसेन ने कई तरह से समझाया कि वह चोर नहीं है, पर सिपाहियों ने उसकी बातें न मानीं। उसे पकड़ ले जाकर दूसरे दिन अदालत में हाजिर किया।

सुनवाई के समय इस बात का पता चला कि धन की पोटली कैसे कई लोगों के हाथों में बदल गई है। इसके बाद गाँव के बुजुर्गों को भद्रसेन के धोखे का पता चला। वैशाख पर उन लोगों ने संदेह किया था, इस पर दुखी हो सब ने उससे क्षमा माँग ली। भद्रसेन और उसके बेटे को जुर्माना लगाया गया।

सच्चा बड़प्पन

पुराने जमाने में विदर्भ देश में एक करोड़पति व्यापारी था। उसकी कई लड़कियाँ थीं; एक भी लड़का न था। इस पर उसकी पत्नी ने समझाया–"हमारे घर में लक्ष्मी निवास करती हैं। एक बार गाँव के सभी लोगों को बुलाकर दावत क्यों नहीं देते? शायद इसके फल स्वरूप कोई लड़का पैदा हो जाय!"

व्यापारी ने दावत का प्रबंध करके गाँव के सारे लोगों को न्योता दिया। उस दावत में गाँव के सभी लोग आये, मगर लकड़हारा गजानन न आया। इसके बाद एक बार उस व्यापारी को जब गजानन दिखाई दिया, तब उसने पूछा –"तुमने दावत में क्यों भाग नहीं लिया?" इस पर उसने जवाब दिया–"महाशय, आपने जब गाँव भर के लोगों को दावत दी, उस दिन मेरा सारा परिवार इसलिए भूखा रहा कि हमारी लकड़ी खरीदनेवाला कोई न था!"

"तुम सबने आकर भोजन क्यों नहीं किया?" व्यापारी ने आश्चर्य में आकर पूछा।

एक जून आप के यहाँ खाना खाने के बदले में हमें ज़िंदगी भर आप के सामने सर झुकाना होगा। मैं अपनी मेहनत पर जी सकता हूँ, ऐसी हालत में मैं ऐसा क्यों करूं?" गजानन ने कहा। इसके बाद जब गाँव के लोगों ने उस व्यापारी की तारीफ़ में कहा कि आप से बड़ा आदमी इस गाँव में कोई दूसरा नहीं है, तब उसने यही जवाब दिया–"मुझसे बड़ा आदमी लकड़हारा गजानन है।"

मेहनत का फल

किसी राज्य में एक गरीब ब्राह्मण था। उस के एक छोटा-सा मकान था। वह रोज भिक्षाटन किया करता था। उसे और उसकी पत्नी का पेट भरने लायक़ चावल के प्राप्त होते ही वह संतुष्ट होकर घर लौट आता था। पत्नी खाना बनाती, पिछवाड़े में कोई सब्जी पैदा होती, उसीसे उनका काम बन जाता।

कालांतर में ब्राह्मण की उम्र बढ़ती गई, भिक्षाटन पर जाना उसके लिए मुश्किल हो गया। इस पर उसको पत्नी ने समझाया–"आप ने कभी कल के बारे में नही सोचा। अगर हमने अपने भविष्य के बारे में सोचा होता तो आज हमें यह मुसीबत न होती। फिर भी कोई बात नहीं, लोग कहते हैं कि इस नगर का राजा बड़ा दानी है। आप जाकर याचना कीजिए, हमारा दारिद्रय वे दूर करेंगे।"

ब्राह्मण ने राजा के पास पहुँचकर आशीर्वचन सुनाया। राजा ने पूछा–"बताइये, आप क्या चाहते हैं?"

"महाराज, आप तो खुद संपन्न हैं। मगर मैं आप से उसमें से कोई हिस्सा लेना नहीं चाहता। आप स्वयं मेहनत करके जो कुछ कमाते हैं, उसमें से थोड़ा हिस्सा मुझे दे दीजिए। मैं उसीसे संतुष्ट हो जाऊंगा।" ब्राह्मण ने जवाब दिया।

राजा के पास वैसे भारी संपत्ति थी। पर उसमें से एक कौड़ी भी उसकी ख़ुद की कमाई न थी। अगर ब्राह्मण को कुछ दान देना है तो उसे मेहनत करके कमाना होगा। इसलिए राजा ने ब्राह्मण से कहा–"तब तो आप कृपया कल शाम को आ जाइयेगा।"

ब्राह्मण राजा की बात मान कर चला गया। दूसरे दिन राजा सवेरे ही उठकर

२५ वर्ष पुरानी चन्दामामा की कहानी

मैले कपड़े पहनकर एक मजदूर के रूप में घर से चल पड़ा। वह थोड़ी ही दूर गया था, एक गली में एक कुम्हार मिट्टी के बर्तन बनाते हुए दिखाई दिया। राजा ने कुम्हार से पूछा—"सुनो भाई, मुझे कोई काम दिलाओ।"

"काम की क्या कमी है? मैं इस चाक पर बर्तन बनाता हूँ, तुम मिट्टी सानने का काम करो, शाम तक यह काम करोगे तो तुम्हें चार सिक्के दे दूंगा।" कुम्हार ने जवाब दिया।

राजा ने उसकी बात मान ली। लेकिन वह ठीक से मिट्टी सानने का काम कर न पाया। मिट्टी को अपने पैरों से सानते उसके पैर दुखने लगे। इसे देख कुम्हार बोला—"तुम से यह मजदूरी बनती नहीं, चलो, मैंने वचन दिया है, इसलिए तुम्हारी मजदूरी दे देता हूँ। लो, ये चार सिक्के।" यों डांट कर कुम्हार ने राजा को सिक्के देकर भेज दिया।

उसी दिन शाम को ब्राह्मण राजा के पास पहुँचा। राजा ने ब्राह्मण के हाथ चार सिक्के थमाकर कहा—"ये ही चार सिक्के मेरी मेहनत का फल है।"

"महाराज, ये ही सिक्के मेरे लिए सब कुछ हैं।" इन शब्दों के साथ ब्राह्मण राजा को हृदयपूर्वक आशीर्वाद देकर चला गया।

ब्राह्मणी यह सोचकर अपने पति के इंतज़ार में बैठी रही कि उसका पति राजा के यहाँ से कई गाड़ियों पर इनाम लदवा कर ले आएगा। पर अपने पति को खाली हाथ लौटते देख उसने पूछा—"अजी, क्या राजा ने कल पर टाल दिया?"

"नहीं, दान लेकर ही आया हूँ! लो, ये चार सिक्के।" यों कहते ब्राह्मण ने चार सिक्के अपनी पत्नी के हाथ रख दिये।

उन सिक्कों को देखते ही ब्राह्मणी का क्रोध भड़क उठा। वह गरज कर बोली—"तुम राजा के यहाँ दान लेने गये, वहाँ से ये ही सिक्के ले आये हो?" यों कह कर उसने उन सिक्कों को पिछवाड़े में फ़ेंक दिया।

तब तक अंधेरा फैल चुका था। इसलिए ब्राह्मण ने सोचा कि सवेरा होते ही उन सिक्कों को ढूंढ़ निकाले। लेकिन दूसरे दिन बहुत-कुछ खोजने पर भी वे सिक्के दिखाई नहीं दिये। पर वहां चार अनोखे छोटे पौधे दिखाई दिये।

देखते-देखते वे चारों पौधे बढ़ने गये। जल्द ही उन पौधों में फल लगे। ब्राह्मण और उसकी पत्नी ने फल तोड़े। खाने के ख्याल से ज्यों ही उन्हें काटा, उनमें मोती भरे हुए थे। वह गरीब दंपति अपनी आँखों पर आप विश्वास न कर पाये। जौहरी के पास ले जाकर जब उन दोनों ने वे मोती दिखाये, तब जौहरी ने बताया कि वे उत्तम किस्म के मोती हैं!

इतने साल बाद उस गरीब दंपति की दरिद्रता दूर हो गई। वे चारों पेड़ कल्प-वृक्षों की तरह लगातार फल देते रहे, इस वजह वे उन फलों को गांववालों में दान देने लगे।

कुछ ही दिनों में उस नगर के राजा को उस ब्राह्मण की बात मालूम हो गई। राजा की समझ में यह बात न आई कि मेहनत के फल का दान मांगनेवाला यह ब्राह्मण चार सिक्के ले गया और वह थोड़े दिनों में कैसे इतना बड़ा धनी बन गया है। यह बात जानने के लिए राजा खुद ब्राह्मण के घर गया।

ब्राह्मण ने राजा को आश्चर्य चकित देख कहा–"महाराज, आपने मुझे जो चार सिक्के दिये थे, वे मैंने खर्च नहीं किये। मैंने उन्हें अपनी पत्नी के हाथ दिये। उसने रूठ कर पिछवाड़े में फेंक दिये। दूसरे दिन ढूंढने पर भी वे सिक्के नहीं मिले; मगर ये विचित्र पेड़ उग आये थे। इनकी वजह से कई पीढ़ियों की हमारी दरिद्रता दूर हो गई।"

तब जाकर राजा को मेहनत के फल का मूल्य मालूम हो गया। उसी दिन राजा ने यह क़ानून बनाया कि सारी जनता को अपनी मेहनत के फल पर ही ज़िंदगी बितानी है।

पंचायुध

ब्रह्मदत्त जिस समय काशी पर शासन करते थे, उन दिनों में बोधिसत्व ने युवराजा के रूप में जन्म लिया। नामकरण उत्सव के दिन अनेक देशों से ज्योतिषी आये। उन लोगों ने राजा से बताया– "महाराज, यह बालक बड़ा ही होनहार है। पाँच आयुधों के द्वारा सारे संसार को जीत सकनेवाला पराक्रमशाली है।" यों कहकर उस बालक का सबने मिलकर पंचायुध नामकरण किया।

थोड़े दिन बीत गये। लड़का जब थोड़ा समझदार बन गया, तब उसे गांधर्व देश के तक्षशिला नगर में महा पंडितों के पास विद्याभ्यास करने के लिए भेज गया।

पंचायुध तक्षशिला में कुछ वर्ष तक विद्याभ्यास करके सभी शास्त्रों में पारंगत हो गया। गुरुकुल से विदा होते वक़्त गुरु ने शिष्य को आशीर्वाद देकर पाँच आयुध प्रदान किये। इसके बाद पंचायुध अपने गुरु की अनुमति लेकर काशी राज्य के लिए चल पड़ा।

मार्ग मध्य में पंचायुध को एक बहुत बड़ा जंगल पार करना पड़ा। जब वह जंगल के रास्ते चल रहा था, तब कुछ लोग उसके सामने से आ गुजरे। उन लोगों ने पंचायुध को समझाया–"बेटा, तुम तो छोटी उम्र के हो! इस घने जंगल में रोमांच नामक राक्षस निवास करता है। उसकी दृष्टि में पड़ जाओगे तो तुम्हारी जान की खैर नहीं। इसलिए तुम इस मार्ग को छोड़कर किसी दूसरे रास्ते से इस जंगल को पार करो।"

पराक्रमी पंचायुध ने उनकी बातों पर कोई ध्यान नहीं दिया। वह उसी जंगल के रास्ते पर चलने लगा। रास्ते में एक जगह एक ताड़ के पेड़ के बराबर ऊँचा

जातक कथा

रोमांच नामक राक्षस उसके सामने आ खड़ा हुआ।

रोमांच देखने में भयंकर लग रहा था। उसका सर भारी था। उसकी आँखों से अंगारे छूट रहे थे। हाथी के जैसे उसके मुँह से दो दांत निकल आये थे। सारे बदन में भालू जैसे रोये फैले हुए थे।

राक्षस रोमांच ने पंचायुध का रास्ता रोककर पूछा–"अबे, तुम कौन हो? कहाँ जा रहे हो? रुक जाओ! इस जंगल में प्रवेश करने की तुमने कैसी हिम्मत की? मेरे नाम से ही लोग थर-थर कांप उठते हैं। लो, मैं अभी तुम को पकड़कर निगलने जा रहा हूँ।"

पर पंचायुध जरा भी विचलित नहीं हुआ। उसने कहा–"हे राक्षस राजा! मैं जान-बूझकर ही इस जंगल से होकर चला जा रहा हूँ। खबरदार! तुम मेरे नजदीक़ मत आओ।" ये शब्द कहते पंचायुध ने अपने तीर का निशाना बनाकर राक्षस पर छोड़ दिया।

सर्र से जाकर तीर राक्षस के धारण किये हुए जानवर के चमड़ों से जा लगा। लेकिन उसे कोई घाव नहीं हुआ। इस बार पंचायुध ने लगातार दो-चार बाण छोड़ दिये, फिर भी कोई फ़ायदा न रहा। अंत में जहर में बूझे बाणों का उस पर प्रयोग किया। उनके द्वारा भी राक्षस की कोई हानि नहीं हुई।

राक्षस जोर से हुंकार करके पंचायुध पर हमला कर बैठा। पंचायुध ने अपना खड्ग निकाल कर उस पर फेंक दिया; फिर भी राक्षस विचलित नहीं हुआ।

इस पर पंचायुध ने राक्षस से कहा–"तुम अपने अज्ञान की वजह से मुझको पहचान नहीं पा रहे हो! मेरा नाम पंचायुध है। इस जंगल में प्रवेश करते समय मैं सिर्फ़ अपने आयुधों पर विश्वास करके नहीं चला।" यों कहकर उसने अपनी मुट्ठी बांधकर राक्षस पर प्रहार किया। फिर भी राक्षस विचलित नहीं हुआ।

राक्षस अट्टहास करके बोला–"अबे लड़के! तुम्हारे व्यवहार को देखने पर तुम मुझे साधारण मानव के जैसे नहीं लगते हो! तुमने प्रलय भयंकर जैसे मेरा सामना करने का साहस किया। मानव तो मेरे रूप को देख कर ही कांप उठते हैं! लेकिन तुम्हें अपने प्राणों का डर नहीं है! इस बात का मुझे आश्चर्य होता है! इसकी वजह क्या है?"

"आखिर डर किसलिए! यह प्रकृति का नियम है। हर एक प्राणी के जन्म के साथ ही मरण लगा रहता है। अलावा इसके मेरे शरीर में वज्र के जैसा एक खड्ग है। वही ज्ञान का खड्ग है। अगर तुम मुझको निगल डालोगे तो वह खड्ग तुमको चीर डालेगा!"

राक्षस पल-दो-पल सोचता रहा तब बोला–"लड़के! तुम्हारी बातों में मुझे

कोई सत्य नज़र आता है! चाहे जो हो तुम तो निडर हो। शूर-वीर हो। तुम जैसे व्यक्ति को में निगल भी डालूं, पर यह बात सत्य है कि तुम्हें हजम करना मेरे लिए मुश्किल है। अब तुम स्वेच्छा पूर्वक अपने रास्ते जा सकते हो।"

पंचायुध के रूप में जन्म लेने वाले बोधिसत्व ने राक्षस को आशीर्वाद देकर कहा-"तुमने मुझे छोड़ दिया, बड़ी अच्छी बात है। लेकिन तुम्हारी बात क्या होगी? कई जन्मों से ऐसे दुष्ट कार्य करते हुए तुम यों निकृष्ट जीवन बिता रहे हो। अज्ञान रूपी अंधकार में छटपटा रहे हो। चाहे युग भी बीते, तुम्हारी हालत यही रहेगी। इस बात का मुझे दुख है!"

"महानुभाव, तब तो इस अज्ञान रूपी अंधकार से बाहर निकलने का कोई रास्ता भी है? अगर हो तो कृपया बताइये।" राक्षस ने हाथ जोड़कर पूछा।

"तुम इस जंगल को अपना निवास बना कर इस रास्ते से गुजरने वाले मानवों को पकड़ कर खाते हो और इस तरह तुम अपना पाप बढ़ाते जा रहे हो। उस पाप के बढ़ने के साथ तुम बराबर राक्षस का जन्म लेते हुए यातनाएँ झेलोगे, पर तुम्हें कभी मोक्ष प्राप्त न होगा। यदि तुम सब प्राणियों में उत्तम जन्म मानव जन्म चाहते हो तो तुम पाप करना छोड़ दो।" यों बोधिसत्व ने राक्षस को उपदेश दिया।

इसके बाद बोधिसत्व ने राक्षस को मानवों के द्वारा हित पाने के लिए अनुसरण करने योग्य पांच महा सूत्रों तथा मानवों को तुच्छ बनानेवाले पांच तंत्रों का विवरण विस्तार के साथ दिया।

उस दिन से रोमांच ने अपने राक्षस कार्य करना छोड़ दिया। साथ ही जंगल से गुजरनेवाले मुसाफ़िरों को आतिथ्य देते हुए धर्म स्वभाव रखनेवाले के रूप में प्रसिद्ध हुआ।

इस प्रकार बोधिसत्व के धर्मोपदेश के कारण महान भयंकर राक्षस उत्तम मार्ग का अनुयायी बन गया।

खारवेल

कलिंग राज्य के मुख्य नगर में, एक जमाने में महावीर जिन की विशाल मूर्ति स्थापित थी। वह मूर्ति जनता के लिए अत्यंत पवित्र थी। पर नंदवंशी मगध का राजा कलिंग राज्य पर हमला करके महावीर की मूर्ति को अपने साथ ले गया।

इस घटना के थोड़े दिन बाद अशोक ने कलिंग पर हमला किया। कलिंग की जनता ने अशोक की सेना का सामना किया। उस युद्ध में कई लोग मर गये। उस युद्ध की खून-खराबी देख अशोक में हृदय-परिवर्तन हुआ। पर कलिंग देश की जनता का जीवन उस युद्ध की वजह से छिन्न-भिन्न हो गया।

मौर्य साम्राज्य में छठा राज्य बना हुआ कलिंग देश अशोक की मृत्यु के बाद फिर स्वतंत्र बना। इसके कुछ दिन बाद भारी तूफानों का शिकार हो कलिंग के गांव व शहरों के साथ राजधानी नगर भी ध्वंस हुआ।
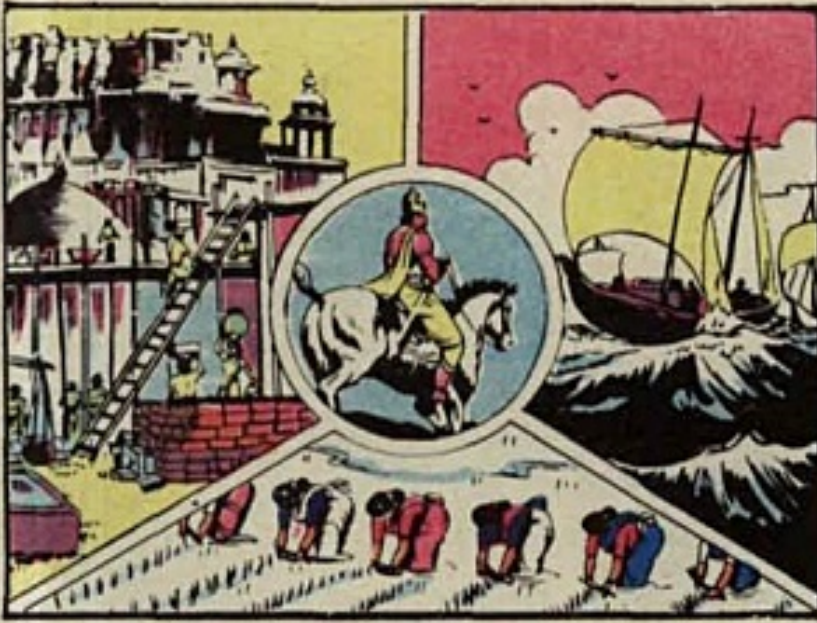
जब देश इस प्रकार की भारी मुसीबतों में फंसा हुआ था, तब खारवेल नामक युवराजा गद्दी पर बैठा। उसने अपनी भारी शक्ति और सामर्थ्य का उपयोग करके दिन–रात परिश्रम कर आज के भुवनेश्वर के समीप एक नई राजधानी का निर्माण कराया। साथ ही खेती-बाड़ी और वाणिज्य को प्रोत्साहित किया।

जनता में आत्म विश्वास तथा स्वाभिमान का पुनरुद्धार करने के लिए खारवेल ने ललित कलाओं को प्रोत्साहित किया। नृत्य, संगीत जैसी कलाओं ने जनता को अपार आनंद पहुँचाया। कई वर्षों की यातनाओं के बाद फिर से जनता सुख और संतोष का अनुभव करने लगी।

खारवेल इससे संतुष्ट नहीं हुआ। उसने सोचा कि जनता को और अधिक चेतनाशील बनाना है तो उसे कोई न कोई महान कार्य संपन्न करना होगा। इसके वास्ते सब से पहले उसने एक भारी सेना इकट्ठी की। अपनी सैनिक शक्ति पर पूर्ण विश्वास पैदा होने के बाद कार्य क्षेत्र में उतरा।

मगध पर आक्रमन करने की खारवेल ने तैयारी की। महावीर जिन की मूर्ति को फिर से अपनी राजधानी में लाकर अपने राज्य के अपमान को मिटाना चाहता था। फिर क्या था, कलिंग की सेना मगध की राजधानी राजगृह की ओर चल पड़ी।

उसी समय डिमिट्रियस नामक ग्रीक राजा की सेनाएँ भी राजगृह पर हमला करने जा रहीं थीं। इस पर मगध राजा यह सोचकर डर गया कि उसकी राजधानी पर दोनों तरफ़ से हमला होनेवाला है।

खारवेल ने अपनी सेना के साथ मगध राज्य की सीमा पर डेरा डाला। डिमिट्रियस के एक दूत ने खारवेल के पास पहुँचकर उसका संदेशा सुनाया कि उसका राजा खारवेल की विजय की कामना करता है। इसलिए वे दोनों राजगृह पर दो तरफ़ से हमला करें तो ज्यादा आसान होगा।

खारवेल ने समझ लिया कि डिमिट्रियस का व्यूह विजय पाने केलिए निकट मार्ग है, लेकिन बाद को वह इस निर्णय पर पहुँचा कि एक विदेशी शासक को अपने देश के किसी भाग को जीतने का मौक़ा नहीं देना चाहिए : फिर ग्रीकसेना पर युद्ध की घोषणा करके उसे दूर भगा दिया ।

इसके बाद खारवेल अनेक राज्य जीतकर भारत के अनेक प्रदेशों का चक्रवर्ती बन बैठा । उसने जब मगध पर आक्रमण किया, तब मगध के राजा ने महावीर जिन की मूर्ति को स्नेह पूर्वक खारवेल के हाथ सौंप दिया । इस कारण मगध और कलिंग सेनाओं के बीच युद्ध रुक गया ।

खारवेल ने अपने शासन काल में जैन मत के विकास के हेतु भारी प्रयत्न किया । उसने जैन पंडित परिषद की स्थापना की । जैन सन्यासियों के लिए भुवनेश्वर के समीप में उदयगिरि तथा खंडगिगि के पहाड़ों में गुफाओं का निर्माण कराया ।

कोदण्ड राम

नारायणपुर का निवासी भोगराज ने व्यापार में लाखों रुपये कमाये। इस पर अपनी मनौती के मुताबिक़ कोदण्ड राम को समर्पित करने के लिए सौ सोने की गिन्नियाँ बनवाई और अपनी पत्नी के साथ यात्रा केलिए मुहूर्त का भी निर्णय करवाया।

दूसरे दिन सवेरे वे दोनों कोदण्डराम के मंदिर के लिए रवाना होने वाले थे, लेकिन उसके पिछले दिन की रात को चोर उसके घर में घुस आये। संदूक़ सहित गिन्नियाँ भी उठा कर ले गये। भोगराज, उसकी पत्नी तथा पुत्र कनकराज ने संदूक़ की खोज की, पर कहीं वह दिखाई न दी, पर पिछवाड़े के किवाड़ खुले थे, तब जाकर उन्हें मालूम हुआ कि चोरी हो गई है।

चोरी के बारे में भोगराज ने कोतवाल में जाकर रपट दी, लेकिन उसका कोई फ़ायदा न रहा।

भोगराज यह सोचकर बड़ा दुखी हुआ कि भगवान की मनौती की गिन्नयाँ चोरी हो गई हैं। फिर से उसे गिन्नियाँ बनवानी थीं। इस वास्ते उसने अपनी यात्रा स्थगित की।

इस बीच एक दिन किसी ने आकर भोगराज के हाथ एक चिट्ठी दी, जिसमें यों लिखा हुआ था।

"पूज्य दाता श्री भोगराज की सेवा में,

आप की कृपा से मेरी पुत्री चिरंजीवी इंदिरा का विवाह अगले इतवार को होना निश्चित हुआ है। इस संदर्भ में आप के उपकार को हम जिन्दगी भर कभी भूल नहीं सकते। विवाह के दिन पधार कर आप कृपया वर-वधू को आशीर्वाद देकर हमें अनुगृहीत करें।

भवदीय

अरुणाचल वर्मा, सीतापुर।"

रघुनाथ प्रसाद

इस चिट्ठी को पढ़कर भोगराज आश्चर्य में आ गया। चिट्ठी लानेवाला या भेजनेवाला व्यक्ति भी उसके परिचित न थे। वह खुद नहीं जानता था कि उसने उसकी कैसी सहायता की है। इसका पता लगाने के लिए भोगराज इतवार के दिन सीतापुर पहुँचा। आखिर अरुणाचल के घर का पता लगाया।

अरुणाचल ने भोगराज की बड़ी आव-भगत की। उसने कहा—"महानुभाव, मैं समय पर अपनी बेटी की शादी के वास्ते रुपये जुटा न पाया, इसलिए यह सोच कर घबड़ाये हुए था कि शादी रुक जाएगी। उस हालत में आपने भगवान की भाँति धन भेज कर मेरी मदद की। आप के इस उपकार को मैं ज़िन्दगी भर भूल नहीं सकता।"

"किसने धन लाकर तुम्हारे हाथ दिया?" भोगराज ने अरुणाचल से पूछा।

"कोई कोदण्डराम है! उसने बताया कि आप इस धन से अपनी बेटी की शादी कर दीजिए। इस धन को नारायणपुर के भोगराज ने भेज दिया है।" अरुणाचल ने जवाब दिया।

अपने आश्चर्य को दबाये शादी के होते ही भोगराज अपने गाँव को लौट आया।

दूसरे दिन विक्रमपुर से कुछ किसान भोगराज के पास पहुँचे और बोले-"आप ने हमारे वास्ते जो कुआँ खुदवाया है, उसका उद्घाटन आप ही के हाथों हो।"

भोगराज नेअचरज में आकर उनकी ओर देखा। तब किसान बोले–"महानुभाव, आप इतनी जल्दी भूल गये? हम लोग पानी के अभाव में बहुत ही परेशान थे। आपने हमारे गाँव के लोगों के लिए पीने के पानी के वास्ते कुआँ खुदवाने कोदण्डराम के हाथ धन भेज दिया था न?"

फिर वही कोदण्डराम!

भोगराज ने अपने आश्चर्य को प्रकट होने न दिया। उसने किसी बात की याद करने के जैसे अभिनय किया, अपनी मीठी बातों से उन्हें खुश करके भेज दिया। इसके बाद विक्रमपुर जाकर उसने कुएँ का उद्घाटन किया। उस गाँव के निवासियों की प्रशंसाएं पाकर घर लौट आया।

भोगराज के मन में यह शंका पैदा हुई कि उसने मनौती चुकाने के लिए जो सोने की गिन्नियाँ बनवाई थीं, उनके खो जाने पर उस पर कृपा करके साक्षात् कोदण्डराम ही उसके नाम पर ये सारे काम करवा रहे हैं!

कुछ दिन बाद किसी अजनबी ने आकर भोगराज को प्रणाम किया और बोला–"महाशय, मेरा नाम नागराज है। मैं एक भयंकर बीमारी से तड़प रहा था। उसकी दवा बनाने के लिए वैद्य रामाचारी ने सोना लाने को कहा। लेकिन मैं तो गरीब हूँ! सोना कहाँ से लाता? सब लोग यही सोच रहे थे कि मेरी मौत निश्चित है। ऐसी हालत में कोदण्डराम नामक व्यक्ति आ पहुँचा और बोला–"भोगराज साहब ने

तुम्हारे वास्तें यह सोना भेज दिया है।" यह कहकर थोड़ा सोना दे गया। वैद्य ने उसे गलाकर औषध तैयार किया, और इस तरह मेरी बीमारी दूर की। आप की मेहर्बानी से मैं मौत के मुंह से बच निकला।"

भोगराज ने उचित रीति से वार्तालाप के द्वारा उसे संतुष्ट किया और उसे फल देकर भेज दिया।

उसी वक़्त सुनार लक्ष्मीनारायण ने आकर सौ सोने की गिन्नियाँ दे दीं और उन्हें बनाने की मज़ूरी लेकर चला गया।

इस पर भोगराज ने अपनी मनौती चुकाने के लिए फिर से यात्रा की तैयारी की। उसी वक़्त बगल के कमरे में से उसके पुत्र कनकराज की ये बातें सुनाई दीं। वह किसी से कह रहा था—"दोस्त, तुम्हारे कहे मुताबिक़ मैंने कोदण्डराम का अभिनय किया। मेरे पिताजी बेचारे सोचते हैं कि उनका यश फैलाने के लिए अपनी भक्ति पर प्रसन्न हो सचमुच देवता ने ही ये सब कार्य किये हैं, आखिर हमने मेरे पिताजी को धोखा देकर जो सोने की गिन्नियाँ प्राप्त कीं, उन्हें अच्छे-अच्छे कामों में लगा दिया है।"

भोगराज ने समझ लिया कि उसका पुत्र कनकराज अपने दोस्त आनंद से बातचीत कर रहा है।

दूसरे दिन भोगराज ने अपने पुत्र कनक राज को बुलाया, उसके हाथ सौ गिन्नियों से भरी थैली देकर कहा—"बेटा, अब मैं अपनी मनौती चुकाना नहीं चाहता। इन सोने की गिन्नियों का तुम्हीं सदुपयोग करो। तुम अपने दोस्त आनंद से जो कुछ कह रहे थे, वे सारी बातें कल मैंने सुन ली है। मैं नहीं जानता कि मैं कोदण्डराम को जो गिन्नयाँ सौंपना चाहता हूँ, उनका सदुपयोग होगा या नहीं, पर तुम दोनों ने जो अच्छे काम किये, उनके द्वारा मेरे मन को आनंद और संतुष्टि मिली।"

स्वभाव से ही धर्म परायण अपने पिता के अन्दर यह परिवर्तन देख कनकराज बड़ा खुश हुआ।

असली कारण

ब्रह्मदत्त एक गरीब आदमी था। वह ठेकेदारों के यहाँ फल ख़रीद लेता, घर घर जाकर फल बेच देता। इस व्यापार में जो फ़ायदा होता, उसी से वह अपने परिवार का गुजारा करता था। उसके ग्राहकों में शरभदास एक था। उसने ब्रह्मदत्त की इस मेहनत पर रहम खाकर एक दिन पूछा–"तुम एक दूकान खोलो। आराम से एक जगह बैठकर व्यापार क्यों नहीं करते?"

ब्रह्मदत्त ने कहा–"महाशय, इस वास्ते मोटी रक़म की जरूरत होती है। मैं कहाँ से लाऊँ?" शरभदास ने ब्रह्मदत्त के हाथ एक हजार रुपये देकर समझाया–"तुम फलों की दूकान खोलो। मेरा कर्ज अपनी सुविधानुसार चुका दो।" पर ब्रह्मदत्त की पत्नी ने समझाया कि फुटकल चीज़ों की दूकान खोलने से ज्यादा लाभ होता है। ब्रह्मदत्त ने अपनी पत्नी के कहे अनुसार किया। उस व्यापार में लाभ पाने की बात दूर रही, मूल पूँजी भी खो बैठा। इसके बाद शरभदास को सारा हाल सुनाकर बताया–"मैं बड़ा ही बदनसीब हूँ। फिर से फलों की टोकरी सर पर लिये घर-घर घूमकर बेचूँगा।"

शरभदास ने उसे समझाया–"भाई, यह तुम्हारी बदनसीबी नहीं! तुम्हारा जिस व्यापार में अनुभव है, वह न करके अनुभव न रखनेवाला व्यापार करके सारे रुपये खो बैठे। मैं एक हजार रुपये और देता हूँ। तुम फलों की दूकान खोल लो।" ब्रह्मदत्त ने इस बार फलों की दूकान खोली और सचमुच ही वह लाभ पाकर अमीर बन बैठा।

शकुन

रामनाथ और रंगनाथ के बीच गहरी दोस्ती थी। वे अड़ोस-पड़ोसी भी थे। उन दोनों परिवारों के बीच अच्छी मैत्री भी थी।

रामनाथ पुरानी रूढ़ियों को माननेवाला था। वह शकुन देखे बिना कभी घर से निकलता न था। अगर अच्छा शकुन न होता तो वह जरूरी काम भी छोड़ देता और घर पर ही बैठा रहता।

पर रामनाथ की पत्नी को यह बात अच्छी न लगती थी। उसका दृढ़ विश्वास था कि चाहे शकुन अच्छा हो या बुरा, जो काम होना है, वह होकर ही रहेगा।

इस वजह से उसने अपने पति के अंदर परिवर्तन लाने की जिम्मेदारी रंगनाथ को सौंप दी। रंगनाथ ने एक उपाय सोचा और वह उपाय रामनाथ की पत्नी को सुनाया।

उस दिन रात को रामनाथ को खाना परोसते हुए उसकी पत्नी बोली–"अजी, सुनो तो, रंगनाथ भैया को तुम्हें जो सौ रुपये देने थे, वे रुपये मैंने उन्हें दे दिये हैं।"

रामनाथ ने अचरंज में आकर पूछा–"कैसे सौ रुपये? उनको क्यों देना है?"

"बात यह है! कल रंगनाथजी किसी खास काम पर घर से निकल रहे थे, तब आप अचानक उनके सामने आ गये। इस वजह से वे जिस काम पर गये, वह काम तो पूरा न हुआ और उल्टे वे सौ रुपये खो गये। आप का सामने आ जाना अच्छा शकुन समझकर घर से चल पड़े थे, इसलिए उनका नुक़सान हुआ, इस कारण उस नुक़सान के जिम्मेवार आप ही हैं! यों आप उनके कर्जदार बने, यह कहकर वे मुझसे रुपये ले गये हैं।" रामनाथ की पत्नी ने समझाया।

सरला गार्गेय

ये बातें सुन रामनाथ आवेश में आ गया, बोला–"उफ़! उसने हमें कैसा धोखा दिया है! में अभी जाकर इसका फ़ैसला कर देता हूँ।" यों कहकर वह रंगनाथ के घर की ओर दौड़ पड़ा।

अपनी योजना के सफल होते देख रंगनाथ मन ही मन खुश हुआ और बोला–"रामनाथ, बैठो! कैसे आना हुआ?"

"में इस वक़्त बैठने के लिए नहीं आया हूँ। असली बात का फ़ैसला करने आया हूँ।" रामनाथ ने जवाब दिया।

"कैसी बात?" रंगनाथ ने भोला बनते हुए पूछा।

"यही बात! तुमने मेरी पत्नी के सामने कोई असंबद्ध बातें बताकर सौ रुपये हड़प लिये हैं।" रामनाथ ने कहा।

"ओह, यह बात है! इसमें असंबद्ध बात क्या है? कल तुम मेरे सामने से गुजरे, इसीलिए मेरे सौ रुपये खो गये। न्यायपूर्वक ये रुपये तुम्हें ही देना है।" रंगनाथ ने जवाब दिया।

रामनाथ आवेश में आ गया और गरजकर बोला–"यह कैसा न्याय है? तुम्हारे सामने से मेरे गुजरने में और तुम्हारे रुपये खोने में कैसा संबंध है? तुमने अपनी लापरवाही से रुपये खो दिये और मुझ पर अपशकुन का आरोप लगाते हो?"

रामनाथ ने हँसकर कहा–"तब तो तुम्हारा विचार है कि हमें शकुनों पर विश्वास नहीं करना चाहिए। इसका मतलब है कि तुम यह मानते हो कि शकुन और काम के होने व न होने के बीच कोई संबंध नहीं है। असली बात यह है कि तुम्हारी पत्नी ने मुझे सौ रुपये नहीं दिये और न मैंने लिये हैं। शकुनों के प्रति तुम्हारा जो अंध विश्वास है, उसे दूर करने के लिए ही हमने यह नाटक रचा है।"

इसके बाद किसी काम पर घर से निकलते वक़्त शकुन देखने की अपनी पुरानी आदत रामनाथ ने सदा के लिए छोड़ दी।

[२]

हज मुहम्मद अपनी दूकान की देखभाल करने की जिम्मेदारी एक नौकर को सौंपकर चल पड़ा। दिलैला अपनी पोटलियों को लेकर रंगसाज की दूकान में लौट आई और दूकान की देखभाल करनेवाले नौकर से बोली—"सुनो, तुम्हारा मालिक नानबाई की दूकान में है। तुम्हें बुला रहा है। जल्दी जाओ। तुम्हारे लौटने तक मैं दूकान की देखभाल करूँगी।"

नौकर दिलैला की बातों पर यक़ीन करके चला गया। दिलैला ने इस बीच अपने लिए आवश्यक सारी चीजें इकट्ठी कीं। इतने में दूकान के सामने से एक युवक एक गधे पर बोझ लादे गुजरते हुए दिखाई दिया। उसको रोककर दिलैला ने कहा—"देखो बेटा, तुम इस दूकानदार को जानते हो न? यह मेरा बेटा है। मेरे बेटे को कर्जदार पकड़ ले गये हैं। यह सारा समान गाँववालों का है। यह सब उनको लौटाना है। क्या तुम इसे अपने गधे पर लादकर मेरे साथ भेज सकते हो? लो, यह दीनार तुम रख लो! मेरे लौटने के अन्दर तुम दूकान में बचा-खुचा माल तोड़-फोड़ कर डालो, वरना वे लोग जब्त कर लेंगे।"

युवक ने दिलैला की बात मान ली। दिलैला सारा सामान उस गधे पर लादकर वहाँ से चल दी। अपनी माँ को देखते हुए जीनाब ने बड़ी उत्सुकता से पूछा—"माँ, तुम क्या क्या कर बैठी हो?"

"अरी, मैंने एक साथ चार लोगों की आँखों में धूल झोंक दी। देखो ये गहने एक अधिकारी की पत्नी के हैं। दीनारों की यह थैली और यह कुर्ता एक जवान दूकानदार के हैं। गधे पर लादा हुआ

सारा माल एक रंगसाज का है और यह गधा चौथे आदमी का है।" दिलैला ने घमण्ड भरे स्वर में जवाब दिया।

"तुमने जो कुछ किया, अच्छा किया। लेकिन अब तुम घर से बाहर मत निकलो। वे चारों लोग तुम्हारी खोज करते होंगे।" जीनाब ने अपनी माँ को समझाया।

"पगली, अभी हुआ ही क्या? जो होना है, आगे होगा।" दिलैला ने कहा।

रंगसाज नानबाई के यहाँ रोटियाँ और सब्जी खरीद रहा था। उसके नौकर ने वहाँ पहुँचकर पूछा–"साहब, आप ने मुझे क्यों बुलाया?" रंगसाज के मन में कोई शक हुआ। उसने अपनी दूकान को लौटकर देखा। गधे का मालिक दूकान को तोड़-फोड़ करते दिखाई दिया।

"अरे मूर्ख, यह तुम क्या कर रहे हो?" रंगसाज ने गरजकर पूछा।

"क्या कर्जदारों ने तुम को छोड़ दिया?" उस जवान ने रंगसाज से पूछा।

उस युवक की बातें रंगसाज की समझ में न आईं। पर उन्हें एक-दूसरी की बातें समझने में काफी देर लगी। तब रंगसाज ने पूछा–"वह बूढ़ी दिलैला कहाँ है?"

"लेकिन तुम यह बताओ, मेरे गधे का क्या हुआ?" युवक ने पूछा। इस पर सब लोग रंगसाज के मकान की ओर चल पड़े।

रंगसाज ने दर्वाजा खटखटाया तो मोहसिन ने आकर दर्वाजा खोला। रंगसाज ने गुस्से में आकर पूछा–"अरे धूर्त! तुम्हारी माँ कहाँ है?"

"अजी, यह तुम क्या पूछते हो? मेरी माँ के मरे काफी समय हो गया है।" मोहसिन ने जवाब जिया।

थोड़ी देर बाद एक की बात दूसरे की समझ में आ गई। तब मोहसिन ने कहा–"उस बूढ़ी ने मेरे साथ अपनी बेटी की शादी करने का वचन दिया है। इसी वास्ते वह मुझे यहाँ पर बुला लाई है।"

रंगसाज ऊपरी तल्ले में पहुँचा और दर्वाजा खटखटाया। खातून ने आकर

दर्वाजा खोला। रंगसाज ने गुस्से में आकर पूछा–"तुम्हारी माँ कहाँ है?" खातून ने अचरज में आकर कहा–"मेरी माँ के मरे कई साल गुजर गये हैं।"

जब चारों लोगों ने मिलकर एक दूसरे को अपना सच्चा परिचय दिया, तब वे समझ गये कि बूढ़ी दिलैला ने उन सब को कैसा दगा दिया है। इस पर सबने मिलकर खातून को उसके घर भेज दिया और बाक़ी तीनों नगर के अधिकारी खालिद को सारा वृत्तांत सुनाया।

खालिद ने विस्मय के साथ उन लोगों की बातें सुनीं, तब समझाया–"इस बड़े शहर में कई बूढ़ियाँ हैं। उनमें से तुम्हें धोखा देनेवाली बूढ़ी का मैं कैसे पता लगा सकता हूँ? तुम्हीं लोग किसी तरह से कोशिश करके उस बूढ़ी का पता लगाओ! मैं उसे कड़ी सजा दे दूँगा।"

लाचार होकर धोखा खानेवाले तीनों आदमी तीन दिशाओं में बूढ़ी की खोज करते चल पड़े।

इस बीच दिलैला ने सूफी सन्यासिनी का वेष बदल डाला, एक अमीर घर की नौकरानी का वेष धरकर अपनी चालाकी से बगदाद के निवासियों को थर्रा देने के लिए फिर से चल पड़ी। उसे एक मकान में गाजे-बाजों के साथ कोलाहल सुनाई पड़ा। मकान की ड्योढ़ी पर एक गुलाम औरत एक छोटे से बच्चे को गोद में लिये हुए थी। उस बच्चे के बदन पर जरीधार पोशाकें, रत्न खचित आभूषण तथा मोतियों की मालाएँ झूल रही थीं।

उस मकान का मालिक बगदाद के जौहरियों का मुखिया था। उस दिन उस व्यापारी की बेटी की मंगनी का उत्सव मनाया जा रहा था। उस उत्सव में अमीर घरों की कई औरतें आई हुई थीं। व्यापारी की बीबी सबकी मेहमानदारी में लगी हुई थी, इसलिए उसने अपने बच्चे को अपनी एक गुलाम नौकरानी के हाथ सौंप दिया और खिलाने का आदेश

दिया। दिलैला ने ये सारी बातें गली से गुजरनेवालों से जान ली। तब उस बच्चे के बदन पर के आभूषणों को हड़पने की दुर्बुद्धि उसके मन में पैदा हुई।

दिलैला भीड़ को चीरते हुए ड्योढ़ी तक पहुँची और जोर से चिल्ला उठी- "उफ़! मैंने तो बड़ी देरी कर दी!" इसके बाद एक खोटा सिक्का निकालकर गुलाम औरत के हाथ धरकर बोली- सुनो री, मालिकिन से जाकर कह दो कि तुम्हारी पुरानी दाई माँ उमाल खयर ने तुम्हें सलाम बताया है।" गुलाम औरत ने सिक्का अपने हाथ में लेते हुए जवाब दिया-"यह मुन्ना अपनी माँ को देखने पर उनका आंचल पकड़कर हो-हल्ला मचायेगा, फिर उनको छोड़ेगा नहीं! मैं कैसे उनके पास जा सकती हूँ?"

"तुम्हारे लौटने तक मुन्ने को मैं संभाल लूंगी।" दिलैला ने कहा। इस पर गुलाम औरत दिलैला की बातों पर यक़ीन करके भीतर गई।

मौक़ा पाकर दिलैला बच्चे को उठाकर एक सुनसान गली में चली गई। बच्चे के बदन पर के क़ीमती वस्त्र और गहने उतार दिये, तब उसे लेकर एक मशहूर जौहरी की दूकान पर पहुँची। उस जौहरी ने अपने मुखिये के बेटे को पहचान लिया और दिलैला से पूछा-"तुम्हारे मालिक को क्या चाहिए?"
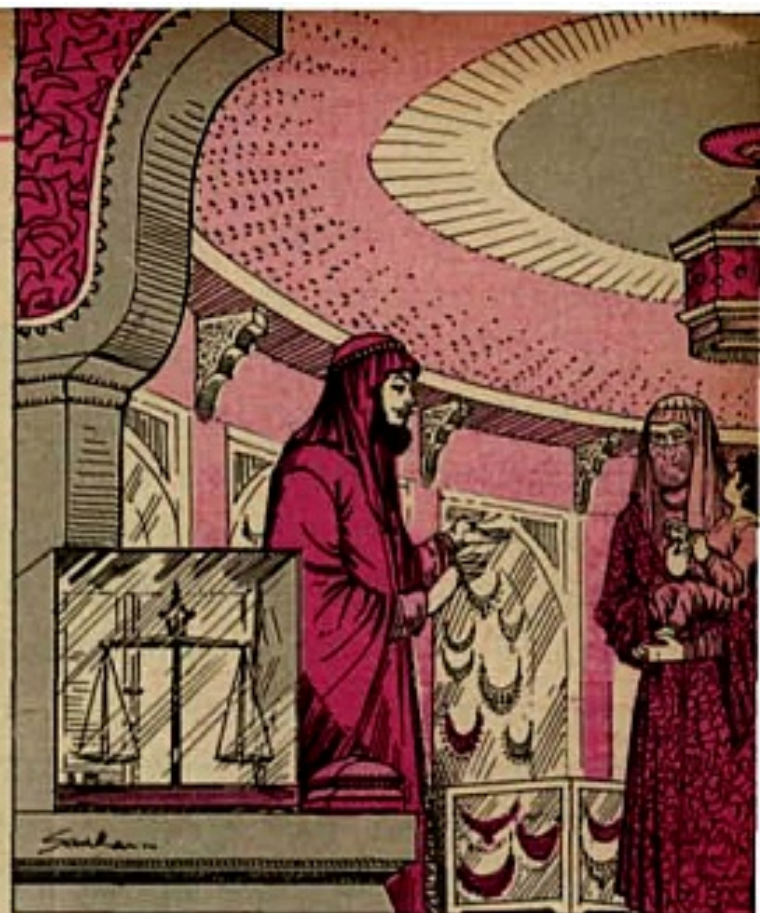
"आज इस बच्चे की दीदी की मंगनी है, इसलिए एक जोड़ी सोने की चूड़ियां, दो जोड़े सोने के पांजेब, हीरों के कर्णफूल और सोने की करधनी चाहिए। ये सारे गहने एक हज़ार दीनारों से कम क़ीमत के न हो! मालिकिन को दिखाकर अगर वे गहने पसंद करेंगी तो अभी धन लेते आऊंगी। तब तक आप चाहे तो इस बच्चे को यहीं पर छोड़ जाऊँगी।" दिलैला ने कहा।

"जैसी तुम्हारी मर्जी!" जौहरी ने जवाब दिया। दिलैला लूट का सारा माल लेकर सीधे अपने घर चल दी।

उधर व्यापारियों के मुखिये के घर में सारा उत्सव शोक में बदल गया। मकान मालिक ने घर लौटकर देखा कि घर में कोलाहल मचा हुआ है। व्यापारी की पत्नी अपने बेटे के वास्ते फ़र्श पर लोटते दहाड़े मारकर रो रही है। बच्चे का पता किसी को मालूम न था। व्यापारियों के मुखिये ने सब कहीं बच्चे की खोज करवाई तो आखिर वह एक जौहरी की दूकान में पाया गया। व्यापारियों के मुखिये ने क्रोध में आकर दांत पीसते हुए कहा—"अरे बदमाश! मेरे बच्चे को उठा लेने की तुम्हारी ऐसी हिम्मत! उसके बदन पर के कपड़े और गहने कहाँ पर हैं?"

"मैंने आप के घर एक हज़ार क़ीमती गहने भिजवा दिये हैं? इसका आप क्या जवाब देंगे?" जौहरी ने तड़पकर पूछा।

दोनों को असली बात समझने में काफी देर लगी। तब तक दिलैला से धोखा खाये हुए तीनों व्यक्ति वहाँ पर आ पहुँचे। तब उन्हें पता चला कि उन सब को दगा देनेवाली औरत एक ही है। सबने अपनी राम कहानी एक दूसरे को सुनाई।

व्यापारियों के मुखिये ने क़सम खाई—"जब तक मैं उस बूढ़ी का पता न लगाऊँगा, तब तक मैं सोऊँगा नहीं!" तब बाक़ी तीनों को समझाते हुए बोला—"मैं भी तुम लोगों के साथ बूढ़ी को पकड़ने के लिए चलूँगा। मगर हम सब एक ही साथ खोज करेंगे तो कोई फ़ायदा न होगा। अलग-अलग रास्ते से जाकर हम उसको ढूँढ़ लेंगे। दुपहर तक हम सब नाई हज मसूद की दूकान पर मिलेंगे।"

दुपहर के समय गधेवाला युवक नाई मसूद की दूकान की तरफ़ बढ़ रहा था, तब उसे अचानक दिलैला दिखाई दी। वह अपना पहले का भेष बदल चुकी थी, उस युवक ने उसे पहचान लिया और डांट कर पूछा—"अरी दगाबाजिन, तुम कहाँ जाओगी? आखिर मेरे हाथ में पड़ गई हो न! अभी मैं तुम्हारी खबर लेता हूँ। तुम्हें छोड़ूंगा नहीं।" (और है)

देवता और राक्षसों ने मिलकर क्षीरसागर का मंथन किया और अमृत प्राप्त किया। विष्णु ने जगन्मोहिनी का रूप धर कर अमृत को राक्षसों के हाथ में पड़ने से बचाया और देवताओं के हाथ सौंप दिया। अमृत पीकर देवताओं ने अमरत्व को प्राप्त किया और वे घमण्डी बनकर स्वेच्छा पूर्वक विहार करने लगे। इस प्रकार दानवों के साथ जो अन्याय हुआ था, उस से नाराज़ होकर तारकासुर ने देवताओं से बदला लेने के लिए भयंकर तप किया। ब्रह्मा को प्रसन्न करके ऐसा वर मांगा जिससे कभी उसकी मृत्यु न हो।

पर ब्रह्मा ने समझाया—"जन्म लेने के बाद हर एक प्राणी के लिए मृत्यु निश्चित है। इसलिए तुम कोई दूसरा वर मांग लो।" तारकासुर ने सोच-विचार करके ब्रह्मा से ऐसा वर मांगा कि शिवजी के पुत्र के द्वारा ही उस की मृत्यु हो। ब्रह्मा ने यह वर उसे दे दिया।

उस समय तक शिवजी की पत्नी सतीदेवी दक्ष के यज्ञ की योगाग्नि में जल कर भस्म हो गई थी। बिना संतान के ही सतीदेवी के वियोग का दुख पाने वाले शिवजी उन्मत्त की तरह हिमालयों में घूमते रहे। आखिर एक जगह विरागी के रूप में घोर तपस्या करने लगे।

इस बीच तारकासुर ने सभी राक्षसों को इकट्ठा किया। तीनों लोकों पर आक्रमण करके देवताओं से बदला लेने के ख्याल से

उन्हें खूब सताने लगा। इन्द्र आदि देवताओं ने ब्रह्मा के पास जाकर अपनी बुरी हालत का परिचय दिया।

ब्रह्मा ने उन्हें समझाया–"मैंने तारकासुर को ऐसा वर दिया है कि शिवजी के पुत्र द्वारा ही उस की मृत्यु हो। इसके अलावा और किसीके द्वारा भी उसकी मौत न होगी।" यों कह कर वें देवताओं को साथ ले उन्हें कोई उपाय बताने के लिए विष्णु के पास पहुँचे।

विष्णु ने उन्हें समझाया–"सतीदेवी हिमवान के पुत्री के रूप में जन्म लेकर पार्वती के रूप में पल रही हैं। तुम लोग ऐसा उपाय करो, जिससे शिवजी का पार्वती के साथ विवाह हो।" इस पर देवताओं ने नारद को हिमवान के पास भेजा। हिमवान नारद के आदेशानुसार शिवजी के पास पहुँचे। उनकी पूजा करके उनसे निवेदन किया कि शिवजी की तपस्या के अनुकूल परिचर्या करने की पार्वती को अनुमति दे। शिवजी को मौन देख हिमवान ने सोचा कि वे मान गये हैं। तब पार्वती को शिवजी की सेवा करने के लिए नियुक्त किया।

नारद ने पार्वती को बचपन से ही शिवजी के प्रति कई कहानियाँ सुनाईं थीं, इसलिए पार्वती शिवजी के गुण, शील स्वभाव तथा उनकी महिमाओंको सुनने का कुतूहल रखती थी। वह सोचती कि अगर विवाह करना हो तो शिवजी के साथ ही करना है। ऐसे महान शिवजी की सेवाएँ करना यौवनावस्था में रहने वाली पार्वती ने अपना भाग्य माना।

शिवजी जिस प्रदेश में तपस्या कर रहे थे, उस प्रदेश में पार्वती सवेरा होने के पहले ही मोर के पिंछ के झाड़ू से साफ कर देती, बर्फ़ के जल में सुगंध मिलाकर छिड़क देती और वहाँ पर मोतियों की रंगेलियाँ सजाती थी। सोने की लताओं से बुने तथा मणि-माणिक जड़े थाल में शविजी के अभीष्ट फल, फ़ूल, बेल के

पत्ते तथा सफ़ेद कुमुद ले जाकर रख देती। सोने के कमण्डलु में हिम-शिखरों से गिरने वाले स्वच्छ जल को भर देती, जपमाला भी रख देती। इस के बाद शिवजी को अपनी ओर आकृष्ट करने के लिए अपने को सजाकर वहाँ पहुँच जाती। किन्नेर वाद्ययंत्र पर शिवजी के लिए अत्यंत प्रिय राग भैरवी, मुखारी, केदार, शिवरंजनी, आदि का आलाप करती। बार-बार प्रयत्न करती कि शिवजी की दृष्टि उस पर पड़े। शिवजी के समीप रहने से उसे आनंद का अनुभव होता।

यह सोच कर पार्वती शिवजी के चेहरे की ओर एकटक देखती रह जाती कि कहीं तपस्या में लीन शिवजी एक बार अपनी शीतल दृष्टि उस पर प्रसारित करे। फिर यह सोचकर निराशा में डूब जाती कि शायद शिवजी भूल से भी सही उसकी ओर दृष्टिपात न करे।

इन्द्र ने सोचा कि शिवजी के मन को विचलित करने के लिए कामदेव की मदद की जरूरत है। तब उन्होंने कामदेव को बुला भेजा। उनका खूब आदर-सत्कार किया, उनकी बड़ी तारीफ़ की। तब उनसे प्रार्थना की कि शिवजी के मन में पार्वती के प्रति अनुराग पैदा करे।

इसके बाद कामदेव रतीदेवी के साथ तोते वाले रथ पर सवार हुए। वसंत उस रथ को चलाने लगे। कामदेव गन्ने के कमान तथा पुष्प बाणों को धारण कर हिमालयों की उन घाटियों की ओर चल पड़े जहाँ पर शिवजी तपस्या कर रहे थे। अचानक वह घाटी वसंत ऋतु की शोभा से भर उठी। कोयलों के संगीत और भ्रमरों के झंकारों से वह घाटी रसमय बन गई। अपने चारों तरफ़ के प्रदेश को वसंत की शोभा में बदलते देख शिवजी ने आँखें खोलकर देखा। असमय में वसंत ऋतु के आगमन पर शिवजी आश्चर्य में आ गये, लेकिन अपनी तपस्या के भंग होते

देख वे दुखी हो गये। उनके हाथ की जपमाला खिसक कर नीचे गिर पड़ी। इस पर पार्वती जपमाला को उठा कर शिवजी के हाथ देने को हुई। उसी वक्त कामदेव ने फूलों की झाड़ी के पीछे से शिवजी के वक्ष का निशाना बनाकर नील कमल बाण को छोड़ा। उसके लगते ही शिवजी ने चौंक कर चारों ओर देखा। उनके सामने घुटने टेक एकटक देखनेवाली पार्वती का चेहरा मनोहर सा लगा।

अपनी तपस्या के भंग होने पर शिवजी चकित हो रुद्र बन गये और अपनी तीसरी आँख को खोल कर कामदेव की ओर देखा। दूसरे ही पल में शिवजी के ललाट के नेत्र में से ज्वालाएँ निकली जिनमें कामदेव जल कर भस्म हो गये। इसके बाद शिवजी झट से उठ खड़े हुए और कैलाश शिखर पर चले गये।

कामदेव के साथ रहनेवाली रतीदेवी अपने पति के भस्म पर गिर कर रो पड़ी। शिवजी की तपस्या को भंग करने के लिए कामदेव को भेजनेवाले इन्द्र आदि देवताओं को रतीदेवी शाप देने को हुई। तब ब्रह्मा आदि देवताओं ने प्रवेश करके समझाया कि शिव और पार्वती का जब विवाह होगा, तब कामदेव को फिर से जीवित करेंगे। इस प्रकार समझा कर रतीदेवी को सहगमन करने से रोका। रतीदेवी कामदेव के भस्म का ध्यान रखते हुए अपने दिन बिताने लगी।

इधर पार्वती के मन में अपने सौंदर्य के प्रति विश्वास जाता रहा। शिवजी के मन को रंजित न कर सकनेवाली अपनी देह को निरर्थक समझ कर वह शिवरंजनी के रूप में तपस्या करने लगी। पार्वती की माँ मेनका ने कई तरह से समझाया कि वह तप न करे, पर पार्वती ने न माना। वह थोड़े से पत्ते खाकर अपने शरीर को कमजोर बनाकर तपस्या करने लगी। जया और विजया नामक दो सखियाँ पार्वती के साथ रहते हुए उसके

कुशल-क्षेम बराबर मेनका और हिमवान को पहुँचाती रहीं। कुछ समय बाद पार्वती पत्तों को खाना भी छोड़कर निराहार ही तप करते अपर्णा कहलाई।

शिवजी ने कामदेव को तो भस्म कर डाला, मगर कामदेव के बाण का प्रभाव व्यर्थ न गया। पार्वती की तपस्या भी सफल हो गई। शिवजी ने छद्म वेश में पार्वती के पास जाकर उसके मन की परीक्षा ली। हृदयपूर्वक पार्वती की प्रशंसा करके उसके साथ शिवजी ने विवाह करने का निश्चय कर लिया। यह रिश्ता क़ायम करने के लिए उन्होंने सप्तर्षियों को हिमवान के पास भेजा शिवजी जैसे महान व्यक्ति के लिए कन्या दाता बन जानेवाले हिमवान ने उत्साह में आकर अपने शिखरों को काफी ऊँचा बनाया। ऋषि विवाह का मुहूर्त निश्चय करके चले गये।

प्रमथ गण आगे चलते रहें। उनके पीछे शिवजी वर के रूप में हिमवान के घर पहुँचे। हिमालयों के शिखर विवाह के मण्डप बने। विष्णु, ब्रह्मा, इन्द्र आदि देवता, हज़ारों महर्षि तथा नारद आदि मुनि वहाँ पर पहुँचे। अरुंधती ने शिवजी के भाल पर विवाह का तिलक सजाया। शिवजी अपने को अलंकृत कर अत्यंत सुन्दर रूप को प्राप्त हुए। इस पर सबने शिवजी को सुंदरेश्वर पुकारा।

पार्वती भी अलंकृत हो विद्युत लता जैसी शोभायमान थी। उस को वधू के रूप में विवाह वेदी तक लाकर विष्णु ने शिवजी से कहा–"आप सुंदरेश्वर हैं तो मेरी बहन पार्वती मीनाक्षी है।" इन शब्दों के साथ उन्होंने पार्वती के हाथ को शिवजी के हाथ में रखा, तब उन दोनों को विवाह की वेदी पर पीढ़ों पर बिठाया। इसके बाद शिवजी और पार्वती का विवाह वैभव पूर्वक संपन्न हुआ।

हिमालयों की घाटी में जहाँ पर शिवजी तथा पार्वती ने तपस्या की थी, वहाँ पर

शिवजी ने फिर से अपना तीसरा नेत्र खोला, पर इस बार उन्होंने अपनी शीतल दृष्टि प्रसारित की। तब वह भस्म राशि अदृश्य हो गई और कामदेव अपने निजी रूप में दिखाई दिये। एक बार अपने गन्ने के कमान को झंकृत कराकर वे अदृश्य हो गये।

उस वक्त शिवजी ने रतीदेवी से कहा– "देवी, तुम्हारा पति फिर से जिंदा हो गया है। तुम्हें पहले ही जैसे हमेशा वह दिखाई देता रहेगा। मगर तुम्हारी दोनों आँखों को छोड़कर दूसरे लोगों को वह दिखाई न देगा। कोई भी उसे देख न सकेगा। इसलिए कोई भी उसकी कोई हानि न कर सकेगा! उसके बाणों के निशानों से कोई बच नहीं सकता। लेकिन तुम्हें छोड़कर और लोगों को दिखाई देना उसकी इच्छा पर निर्भर करता है। मैं ऐसे वर उसे दे रहा हूँ।"

इसके बाद पार्वती और शिवजी ने गृह-प्रवेश किया। कामदेव भी अदृश्य रूप में पुष्प बाणों के साथ रतीदेवी को साथ ले उस कक्ष में पहुँचा। अरुंधती ने नये दंपति का लाल जल से नजर उतारी और कर्पूर आरती उतारी। तब विश्वकर्मा ने आदम कद के एक तख्ते को पार्वती तथा शिवजी के सामने खड़ा किया, जिस

देव शिल्पी विश्वकर्मा ने नये दंपति के वास्ते एक दिव्य अंत:पुर का निर्माण किया।

मंगल वाद्यों के बीच शिव और पार्वती हाथ मिलाये सब के बीच से होकर अंत:पुर की ओर चल पड़े। उस रास्ते पर कामदेव की भस्म राशि दिखाई दी। वहाँ पर रतीदेवी आँखों में आँसू भरते घुटने टेककर इस प्रकार बैठी हुई थी कि मानों वह अपने पति के प्राणों की भिक्षा माँग रही हो।

शिव-पार्वती ने रतीदेवी के पास जाकर उसके सिर पर अपने हाथ रखे और दीर्घ सुमंगली बनने का आशीर्वाद दिया।

पर झीना पर्दा लगा था, तब बोला–"यह एक अनोखा चित्र है। इसमें दो व्यक्ति चित्रित हैं। हम जैसे लोगों को यह बताना कठिन मालूम होता है कि इनमें से किसका सौंदर्य अद्भुत है! इस विश्वास से मैं यह चित्र आप दोनों के सामने रख रहा हूं कि आप ही दोनों इसका निर्णय कर सकेंगे। अब आप दोनों बताइये!" यों कहकर विश्वकर्मा ने चित्र पर टंगे पर्दे को हटाया।

वह एक आदम कद का आईना था। उस आईने में शिव और पार्वती अपने प्रतिबिंबों को देख मंद मंद मुस्कुराये।

नारद ने कहा–"मुस्कुराना कोई जवाब नहीं कहलाता। इसका जवाब आप को देना पड़ेगा।"

शिवजी ने मंदहास के साथ पार्वती की ओर तिरछी नज़र दौड़ाते हुए कहा–"चकाचौंध करते शुक्र जैसे चमकनेवाली नथ पहनी हुई चित्रांगी का सौंदर्य ही महान है।" इस पर पार्वती के कपोल लज्जा के मारे लाल हो उठे। वह वीणा जैसी मधुर स्वर में बोल उठी–"त्रिनेत्र पुरुष का सौंदर्य ही अद्भुत है!"

इसके बाद सबने शिव और पार्वती पर पुष्प और अक्षत् छिड़काये। तदनंतर नव दंपति रेशमी तकियों से सुसज्जित झूलेवाली शय्या पर बैठ गये। उनके सामने एक विशाल दीवार पर एक मनोहर चित्र अंकित था। चित्र के बीच में हाथियों की एक सुंदर जोड़ी नृत्य की मुद्रा में अगले पैर ऊपर उठाये आमने-सामने ऊपर उठाई गई सूंड़ों को लपेटे हुई थीं। तोरण जैसे लगनेवाले उन दो हाथियों के मध्य भाग में दीखनेवाले सरोवर में एक बहुत बड़ा कमल खिल रहा था। उस चित्र में चित्रित हाथियों की जोड़ी पर शिव-पार्वती की दृष्टि केन्द्रित हुई। उसी वक़्त कमलवाले चित्र पर चांदनी जैसी ज्योति चमक उठी। उसका प्रकाश धीरे-धीरे

फैल कर चारों तरफ़ व्याप्त हो गया। उस प्रकाश में शशि वर्ण के साथ चमकने वाले विघ्नेश्वर उन्हें दिखाई दिये।

विघ्नेश्वर का मुख मण्डल हाथी का ही था। फिर भी उसमें दिव्यत्व भरा हुआ था। प्रसन्नता खिल रही थी। उनकी दृष्टि शांत थी और मेधा शक्ति का परिचय दे रही थी। उनकी तोंद चमक रही थी। अभय प्रदान करनेवाली हस्तमुद्रा में खड़े हुए विघ्नेश्वर पार्वती को वात्सल्य की प्रतिमा जैसे दीख पड़े।

विघ्नेश्वर को देखते रहने पर शिवजी तथा पार्वती को अनिर्वचीय आनन्द पैदा हुआ। उस आनन्द में वे तन्मय हो निर्निमेष विघ्नेश्वर की ओर देखते रह गये। विघ्नेश्वर बायीं तरफ़ झुकी अपनी छोटी सी सूंड़ को सहलाते-हिलाते प्यार भरी बातें कहने लगे—"मैं विघ्नेश्वर हूँ। विघ्नों को दूर करनेवाला विनायक हूँ। पंच भूतगणों का अधिपति हूँ। गणपति हूँ। चित्र-विचित्र रूपधारी चित्र गणपति हूँ। आप दोनों के अनुराग के परिणाम स्वरूप शिवजी के तेज को लेकर कुमार स्वामी जन्म लेंगे और तारकासुर का वध करेंगे। कुमार स्वामी के पहले मैं अवतार लेकर आप दोनों का पुत्र बन जाऊँगा। मैं पुत्र गणपति के रूप में अवतार लेने जा रहा हूँ।" गणपति के मुंह से ये शब्द सुनते ही पार्वती ने उसे गोद में लेने के लिए हाथ बढ़ाये। पर विघ्नेश्वर प्रकाश के साथ अदृश्य हो गये।

पार्वती और शिवजी यों सोचते एक दूसरे की ओर प्रश्नार्थक दृष्टि से देखने लगे कि अब तक जो कुछ देख रहे थे, वह सपना है या सच। उस दृष्टि के मिलन में वे समस्त को भूल बैठे। उन्हें जो कुछ अद्‌भुत दृश्य दिखाई दिया था, उसे वे इस तरह भूल गये कि मानो कुछ हुआ ही न हो।

इसके बाद शिवजी और पार्वती उस अंतःपुर में आनन्द सागर में डूब कर गृहस्थी चलाने लगे। उसी वक़्त जगत के लिए एक उपद्रव पैदा हुआ।
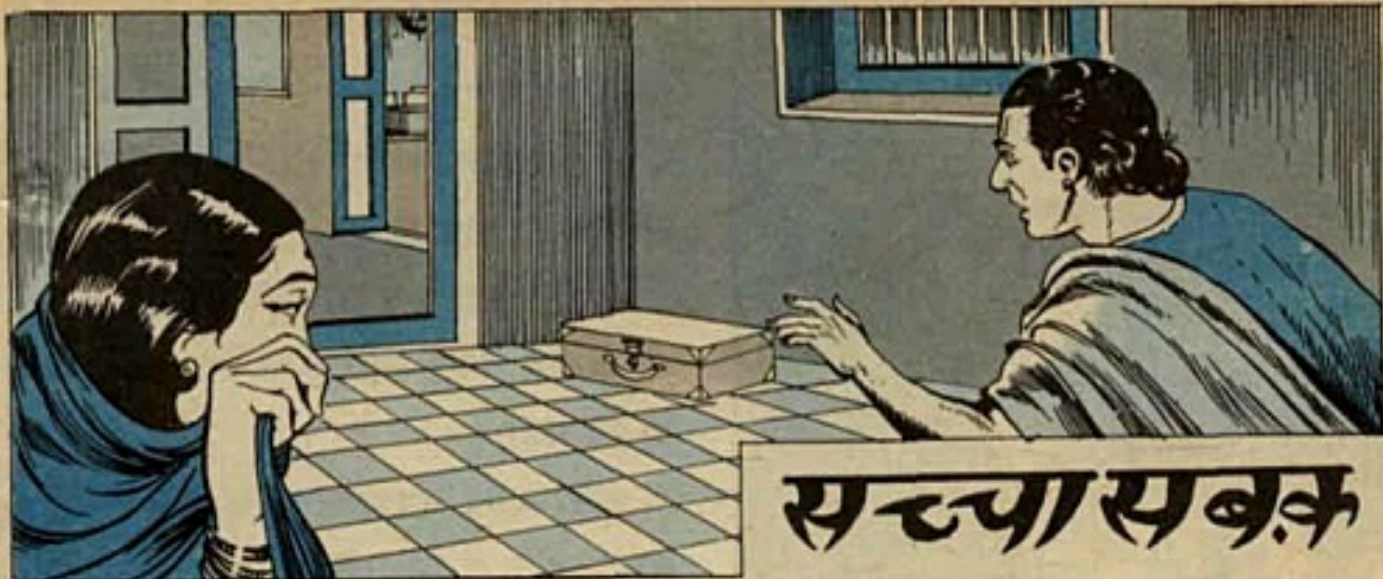
सच्चा सबक़

दूकान बंद करके श्याम लाल घर लौटा तो देखता क्या है ! हाल में अटैची रखी हुई है। उसे देखते ही श्याम लाल ने खीझ कर अपनी पत्नी से पूछा–"फिर से कौन आ धमका है, दावतें उड़ाने के लिए ?"

"जरा धीरे से बोलिए। मेरी छोटी बहन मुझे देखने चली आई है। नहाने गई है।" श्याम लाल की पत्नी पार्वती ने कहा।

श्याम लाल खिल-खिला कर हँस पड़ा और बोला–"तुम जैसी बदसूरत औरत को भी कोई देखने आई है ! वाह, वा !"

पार्वती का दिल कचोट उठा। भारी दहेज लेकर श्याम लाल ने पार्वती के साथ शादी की। उस दिन से लेकर बराबर उसे बदसूरत औरत कहते उसके दिल को दुखा रहा है। स्वभाव से ही पार्वती साधु प्रकृति की है। इसलिए वह उस दुख को पीती जा रही है। पार्वती अपने पति के हाथ पानी का लोटा थमाते हुए बोली–"कल कृपया एक साड़ी खरीद लाइयेगा।"

"नई साड़ी ? किसलिए ?" श्याम लाल ने आश्चर्य में आकर पूछा।

"अजी, मेरे वास्ते नहीं, मेरी बहन के लिए। बेचारी बहुत दिन बाद हमारे घर आई है।" पार्वती ने जवाब दिया।

"वाह, यह भी खूब है। अगर तुमने पहले ही कह दिया होता कि तुम्हारे पीहर वालों को साड़ियाँ और उपहार देना है तो मैंने तुम्हारे बाप से थोड़ा और दहेज वसूल किया होता।" श्याम लाल ने स्पष्ट कह दिया।

इतने में श्याम लाल की साली लक्ष्मी नहाकर वहाँ आ पहुँची। श्याम लाल मुस्कुराते हुए बोला–"ओह, तुम कितने दिन बाद चली आई हो ? कम से कम

रमा चौधरी

शादी के दिन श्याम लाल ने अपने साहस और पराक्रम के बारे में कई कल्पित कहानियां सुनाई थीं। लक्ष्मी उन कहानीयों को भुल न पाई थी।

"हां, तुम्हारा कहना भी सच ही है।" यों जवाब देकर श्यामलाल भी कृत्रिम ढंग से हंस पड़ा।

उसी वक़्त नंददास नामक एक व्यक्ति आया और श्यामलाल के हाथ सौ रुपयों की थैली देकर चला गया। उसने दो साल पहले श्यामलाल के यहाँ से सौ रुपये कर्ज लिया था। उसे चुकाये बिना ही गाँव छोड़ कर चला गया था। इसके बाद उसे शहर में कोई नौकरी मिली, अचानक श्यामलाल के कर्ज की अब याद आई, इसलिए वह पुराना कर्ज चुकाकर गया।

श्यामलाल ने सौ रुपयों की थैली अपनी पत्नी के हाथ देकर तिजोरी में रखने को कहा। पार्वती ने अपने पति को भीतर बुलाया और गिड़गिड़ाकर पूछा–" अजी, सुनिये। हमने सोचा था कि ये रुपये डूब गये! पर आज मिल गये। एक साड़ी खरीद लाइये न?"

"वाह, रुपये हाथ लगे तो तुम लुटाने चली! तिजोरी बंद कर दो।" श्यामलाल ने पार्वती को डांटा।

तुम्हें अपनी दीदी को भी देखने की इच्छा न हुई?"

"जीजाजी, पढ़ाई से मुझे छुट्टी मिले, तब न?" लक्ष्मी ने हँसते हुए जवाब दिया।

"यह बात भी तो सच है, लेकिन तुम जो चली आई, ऐसे वक़्त में आई, जब कि सारा गाँव नक़ाब वाले चोरों के डर से कांप रहा है। रास्ते में अगर किसीने तुम्हें रोक दिया होता तो क्या होता?" श्याम लाल ने पूछा।

"मैं उनके सामने आपका नाम ले लेती तो वे लोग मेरे पैरों पर गिर कर माफ़ी मांग लेते।" ये शब्द कहते लक्ष्मी ठठा कर हँस पड़ी।

पार्वती चुप रह गई। इसके बाद तीनों ने मिलकर खाना खाया।

पार्वती ने थालियां उठाते हुए अपनी छोटी बहन से कहा–"चोरों का डर है न? इसलिए हमें झूठी थालियों को भी रसोई घर में रखना पड़ रहा है।"

"दीदी, यह तुम क्या कहती हो? क्या जीजाजी बाहर नहीं सोते? अगर वे पिछवाड़े में सो जायेंगे तो किस चोर की हिम्मत पड़ेगी कि दीवार फांदकर घर में घुस सके?" लक्ष्मी ने पूछा।

"हां, हां!" कहते श्याम लाल सकपकाया। मगर पिछवाड़े में सोने की बात सुनते ही उसके पैर थर-थर कांपने लगे।

इसके बाद लक्ष्मी खुद झूठी थालियों को कुंए के जगत पर रख आई और बोली– "दीदी, डरने की कोई बात नहीं, जीजाजी तो पिछवाड़े में सोयेंगे।"

पार्वती अपने पति की कायरता से भली-भांति परिचित थी। वह बोली– "अरी, वे कैसे सोयेंगे? वे तो........."

श्यामलाल ने बीच में दखल देते हुए कहा "क्या तुम सोचती हो कि मैं डरनेवाला हूं? एक लाठी चारपाई के नीचे रखकर सो जाऊंगा। कोई कमबख्त चोर आ धमकेगा तो लाठी से उसका सर फोड़ डालूंगा।" पार्वती ने श्यामलाल के वास्ते पिछवाड़े

में खाट लगवाई। श्यामलाल ने खाट के नीचे एक बड़ी लाठी रख ली। दोनों बहनें दर्वाजे बंद कर घर के भीतर लेट गईं। श्याम लाल डर के मारे कांपते हुए आधी रात तक जागता ही रहा। इसके बाद उसकी आंख लग गई। तभी उसे लगा कि कोई उसकी पीठ थपथपा रहा है, वह चौंककर जाग पडा।

उसके सामने नक़ाबवाला चोर खड़ा था। उसके हाथ में चमकनेवाली एक तलवार थी। श्यामलाल के मुंह से बात न निकली। उसने खाट के नीचे की ओर अपने हाथ से इशारा किया। चोर ने खाट के नीचे की लाठी अपने हाथ में लेकर गरज कर पूछा–"मुझे मारने के लिए क्या

तुमने यह लाठी यहाँ पर रख ली है ?" यों कहते उसने छुरी ऊपर उठाई ।

श्यामलाल ने कांपते स्वर में कहा– "उस छुरी को देखने पर मेरे मुंह से बात नहीं निकल रही है । उसे कमर में खोंसकर लाठी हाथ में ले लीजिए ।"

"पहले तुम किवाड़ खुलवा दो । मुझे तो रुपये चाहिए ।" यों कहते चोर ने छुरी दिखायी ।

"घर के अन्दर औरतें सोई हुई हैं ; उनके जाग जाने पर मेरी इज्जत मिट्टी में मिल जाएगी । कुएँ के जगत पर थालियाँ पड़ी हुई है; आप उन्हें उठा ले जाइएगा ।" श्यामलाल ने कहा ।

चोर ने दांत पीस कर पूछा–"क्या तुम्हारी झूठी थालियों को मुझे उठा ले जाने को कहते हो ? ज्यादा बकवास करोगे तो चीर डालूंगा ।"

"धीरे से बोलियेगा । घर के अंदर मेरी पत्नी के अलावा दिल की बीमारवाली मेरी साली भी है ।" यों समझाकर श्यामलाल उठ खड़ा हुआ; खिड़की के पास पहुँच कर धीरे से पुकारा–"पार्वती ! पार्वती !!"

पार्वती आँखें मलते हुए आ पहुँची और पूछा–"क्या आपको डर लगता है ? भीतर आना चाहते हैं क्या ?"

"तुम्हारा सिर ! यहाँ एक बुजुर्ग खड़ा हुआ है । उन्हें रुपयों की जरूरत आ पड़ी है । शाम को नंददास जो रुपये दे गया है, वे रुपये लेती आओ ।" श्यामलाल ने कहा ।

पार्वती ने आश्चर्य के साथ अपने पति के चेहरे की ओर देखा और रुपयो की थैली लाकर उसके हाथ दे दी । श्यामलाल ने उस थैली को चोर के हाथ दे दिया । चोर चुप-चाप अंधेरे में खिसक गया । इसके बाद श्यामलाल को नींद नहीं आई । रुपये खोने की वजह से आँसू बहाते हुए सवेरे तक वह जागता ही रहा ।

दूसरे दिन लक्ष्मी ने श्यामलाल से कहा– "जीजाजी, मैं शाम को अपने गाँव जा

रही हूँ। मेरे आते वक़्त दीदी के वास्ते एक साड़ी खरीद कर लाना चाहती थी, लेकिन समय न रहा। इसलिए मैं रुपये देती हूँ। आप एक साड़ी खरीद लाइये।" यों कहते लक्ष्मी ने श्यामलाल के हाथ रुपयों की थैली थमा दी।

उस थैली को देख श्यामलाल चौंक पड़ा। उसे पिछली रात को श्यामलाल ने खुद चोर के हाथ दे दिया था।

लक्ष्मी ने मुस्कुराकर कहा–"जीजाजी, आँखें फाड़कर देखते क्या हैं? यही सोच कर है न कि चोर के हाथ दी गई थैली मेरे हाथ में कैसे आ गई है? वह चोर और कोई नहीं है, मैं ही थी! मैंने अपने बदन पर दुपट्टा लपेट लिया। फल काटने वाली छुरी हाथ में ली। अपना कंठ स्वर बदल कर आपको धमकाया। आप कायर ही नहीं, बल्कि कंजूस भी हैं। नहाने के बाद बगल के कमरे से मैंने आपके और दीदी के बीच हुई बातचीत को सुन लिया था। बहन बदसूरत है तो वह उसका दोष नहीं है। बाह्य रूप से बदलना किसी के लिए संभव नहीं है। लेकिन कोई भी मानसिक रूप से बदलने का प्रयत्न कर सकता है! अब भी सही, अपनी दुष्ट-बुद्धि को बदल कर कृपया अपनी धर्म-पत्नी के दिल को दुखाना बंद कर दीजिए! यही मैं विश्वास करती हूँ।"

श्यामलाल का चेहरा सफ़ेद बन गया। वह रुपयों की थैली को लक्ष्मी पर फेंककर जल्दी-जल्दी क़दम बढ़ाते गली में घुस पड़ा।

"अरी लक्ष्मी! तुम्हारे जीजाजी नाराज़ हो गये हैं। तुमने ऐसा नाटक क्यों रचा?" ये शब्द कहते पार्वती डर गई।

मगर थोड़ी ही देर में श्यामलाल दो क़ीमती साड़ियाँ लेकर मुस्कुराते हुए लौट आया। पार्वती खुशी के मारे लक्ष्मी का कंधा थप-थपाकर बोली–"अरी, देखो तो! तुम्हारे जीजाजी कैसे बदल गये हैं? साल भर में उनके अन्दर कोई परिवर्तन नहीं हुआ। तुमने एक ही दिन में उनको कैसे बदल डाला?"

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २५)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ मई १९८१ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

S. G. Seshagiri

★

K. Sitharam

- ★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों।
- ★ मार्च १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा।
- ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) २५ रु. का पुरस्कार दिया जाएगा।
- ★ दोनों परिचयोक्तियाँ कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें : चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

जनवरी के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो : **इनके लिए तो सब खेल है !**

द्वितीय फोटो : **यहाँ देखो, दोनों में बड़ा मेल है !!**

प्रेषिका : **बा. सरोज देवी रांका,** पो. नीमाज, बया ब्योवार (राज) ३०६३०३

पुरस्कार की राशि रु. २५ इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 188, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

७७७ आकर्षक
पुरस्कार जीतिये
हॉलिडे नेपाल
जरा देखिए ! काठमांडू में यह सब आपको सुलभ है:
● वन्य जीवन-
..अविश्वसनीय रूप से रोमांचक।
● पहाड़ों के दृश्य—खूबसूरत, विस्मयकारी.
● बागीचे—हरे, लहलहाते और मोहक।
● हर तरह के इनडोर गेम्स।
● होटल में बाल फिल्मों का आनंद।
● बच्चों के विशेष पुस्तकालय।
● विडियो पार्लर्स—'उल्लास से भरपूर।
● नर्सरीज जो आपके नन्हें भाई या बहन का पूरा ध्यान रख सकें।
● मनबहलाव के अन्य साधन : होटल में ही तैराकी और नौका विहार की सुविधा।
● कैसिनो नेपाल जहां आपके माता-पिता रोमांच और उत्तेजना से भरपूर शामों का आनंद ले सकें।
प्रतियोगिता में भाग लीजिए और इस मनमोहक स्वप्नलोक काठमांडू में शानदार छुट्टियां बिताने का अवसर पाइये।
विशेष रोटेशन ट्राफी सहित आश्चर्यजनक शानदार पुरस्कार
विजेता बालक को नई दिल्ली में एक भव्य समारोह जिसमें अनेक विशिष्ट लोग भाग लेंगे 'स्टार ऑफ हॉलिडे नेपाल' की लुभावनी उपाधि से विभूषित किया जायेगा। इसके अलावा विजेता बालक को उसके माता-पिता के साथ दिल्ली से काठमांडू तक मुफ्त हवाई यात्रा की सुविधा दी जायगी। काठमांडू के बेहद आरामदेह होटल स्वीट में ४ दिन और ३ रात तक रहने की मुफ्त व्यवस्था भी होगी... साथ ही खाने, होटल से हवाई अड्डे तक आने जाने, सैर-सपाटे की निःशुल्क सुविधा। और प्रत्येक माता-पिता को कैसिनो नेपाल के सौजन्य से रु० ३००/- मूल्य के फ्री प्ले कूपन्स।
५ शानदार प्रथम पुरस्कार
दिल्ली, कलकत्ता, पटना से विजेता बालक को निःशुल्क हवाई-यात्रा। विजेता बालक और उसके माता-पिता के लिए निःशुल्क हॉलिडे नेपाल फाइव-स्टार योजना।
५ अनुपम द्वितीय पुरस्कार
दिल्ली, कलकत्ता, पटना से विजेता बालक को निःशुल्क हवाई यात्रा। विजेता बालक और उसके माता-पिता के लिए निःशुल्क हॉलिडे नेपाल' थ्री-स्टार योजना।
१० उत्तेजक तृतीय पुरस्कार
दिल्ली, कलकत्ता, पटना से विजेता बालक को निःशुल्क हवाई यात्रा। विजेता बालक और उसके माता-पिता के लिए निःशुल्क हॉलिडे नेपाल' टू-स्टार योजना।
Impressions/H.N. 364

CHANDAMAMA (Hindi) MARCH 1981 Regd. No. M. 5452

P-A-R-L-E
के हिज्जे जांचिये.
हमारे नक्काल हैं बड़े होशियार. आपकी आँखों में धूल झोंकने के लिये वे P-A-R-L-E की जगह P-E-R-L-E या P-E-A-R-L- लिखते हैं और G-L-U-C-O की जगह G-L-U-C-O-S-E लिखते हैं.

याद रखिये,
पारले मोनॅको और क्रैकजॅक कभी खुले नहीं बिकते. इन्हें जब भी खरीदें फैक्ट्री के सीलबन्द पैकेटों में ही खरीदें, ताकि आपको असली बिस्कुट मिलने का भरोसा रहे.
हाँ, पारले ग्लुको पैकेट में भी बिकते हैं, और खुले भी... पर इन्हें खुले खरीदते वक्त बिस्कुट पर पारले ग्लुको के हिज्जे जांच लीजिये.

चख कर देखिये.
स्वाद ही असली कसौटी है. धरती आसमान एक कर, ये नक्काल, हमारे बिस्कुटों और पैकेटों की शक्लोसूरत की नकल भले कर लें, पर पारले का बढ़िया स्वाद और बेहतरीन क्वालिटी कहां से लायेंगे?

वर्ल्ड सिलेक्शन पारितोषिक विजेता

अपने-अपने दायरे में सबसे ज़्यादा बिकनेवाले बिस्कुट-
बेशुमार नकलें... लेकिन वो बात कहां?

पारले ग्लुको पारले मोनॅको पारले क्रॅकजॅक

everest/80/PP/342-hn